# जैविक खेती में जैविक एवं जीवाणु आदान उत्पादन विधियाँ


मूल आलेख
डा. अशोक कुमार यादव

हिन्दी रुपांतरण
डा. अशोक कुमार यादव
एवं
रविंद्र कुमार

संपादन एवं सहयोग
डा. धर्मवीर सिंह



राष्ट्रीय जैविक खेती केन्द्र
कृषि मंत्रालय, भारत सरकार
२०४ बी खण्ड, सीजीओ काम्प्लेक्स २
कमला नेहरू नगर, गाजियाबाद (उ० प्र०)

# अनुक्रमणिका

# जैविक खेती एवं जैविक उपादान

### जैविक अवधारणा

अनेक संभावनाओं व विकल्पों से भरे विश्व में अनेक किसानो उद्योजकों व ग्राहकों हेतु जैविक खेती एक गंभीर विकल्प है। अन्न उत्पादकता, खाद्यान्न सुरक्षा, खाद्य संप्रभुता तथा पर्यावरण की सुरक्षा एवं सुदृढ़ता हेतु जैविक खेती को वैज्ञानिक आधार दिये जाने की आवश्यकता है। आज हमारे सामने सबसे बड़ी चुनौती है कि कैसे हम जैविक खेती को आधुनिक कृषि की सहयोगी के रूप में स्थापित करें और यह सुनिश्चित करें कि अनेक छोटे और मझोले किसान जो आज की वैज्ञानिक कृषि की दौड़ में पीछे रह गये हैं वे जैविक खेती के माध्यम से विकास की मुख्य धारा में शामिल हों।

लगभग एक शताब्दी की विकास दौड़ के बाद जैविक खेती अब मुख्य धारा से जुड़ रही है और सामाजिक, वाणिज्यिक तथा पर्यावरणीय दृष्टि से अपनी उपादेयता सिद्ध कर रही है। जैविक खेती की इस यात्रा में जहाँ विचारों की निरंतरता ने इसे एक स्थायित्व दिया है वहीं आज की जैविक खेती अपने पूर्व रूप से काफी अलग है। आज की जैविक खेती प्रणेताओं के स्वस्थ मृदा, स्वस्थ खाद्य तथा स्वस्थ समाज की अवधारणा को समेटते हुए पर्यावरणीय दृष्टि से अधिक टिकाऊ तथा अधिक उत्पादन क्षम है। १९७० के अपने प्रादुर्भाव के वर्षों से ही जैविक खेती आंदोलन में विविधता तथा संस्थागत सुदृढ़ता का समावेश रहा है। वर्ष १९७२ में आइफोम की स्थापना ने इस आंदोलन को और सुदृढ़ बनाया है तथा अंर्तराष्ट्रीय स्तर पर इसकी उपयोगिता साबित की है। १९९० के दशक में जैविक खेती का तेजी से विस्तार हुआ। भारत में आज की जैविक खेती की शुरूआत हालाँकि कुछ किसान संस्थाओं तथा कृषि उद्योजकों द्वारा की गई थी परंतु अब इसकी विकास यात्रा में अनेक भागीदार हैं जिनमें केन्द्र व राज्य सरकारों की प्रमुख भूमिका है। वर्ष २००१ में वाणिज्य मंत्रालय द्वारा राष्ट्रीय जैविक उत्पादन कार्यक्रम की घोषणा तथा वर्ष २००४ में कृषि मंत्रालय द्वारा राष्ट्रीय जैविक खेती परियोजना की स्थापना जैविक खेती की बढ़ती महत्ता और सरकारी प्रयासों की गंभीरता का द्योतक हैं।

### जैविक रूपांतरण में जैविक उपादानों की आवश्यकता

किसी भी खेत को पारंपरिक खेती से जैविक खेती की ओर उन्मुख करने के लिए सबसे पहला कदम है उस मिट्टी की खोई उर्वरता की पुनर्स्थापना। इसके लिए आवश्यक है रासायनिक उपादानों के प्रयोग पर पूर्ण प्रतिबंध तथा जैविक व जीवाणु उपादानों तथा जैविक प्रक्रियाओं का अधिकाधिक प्रयोग। पोषण प्रबंधन तथा मिट्टी की उर्वरा शक्ति बढ़ाने के लिए फसल अवशिष्ट, पशु मल, वनीय घास-फूस व पत्ती कचरा, हड्डी खाद, बूचड़खाने का अवशिष्ट तथा हरी खाद इत्यादि प्रमुख उपादान हैं। अच्छे परिणामों के लिए इन सभी जैवीय पदार्थों का कम्पोस्ट में परिवर्तन आवश्यक है। किसी भी कम्पोस्ट की गुणवत्ता उसके कच्चे माल तथा कम्पोस्ट प्रक्रिया की गुणवत्ता पर निर्भर होती है। अनेक प्रकार के जीवाणु खाद तथा सूक्ष्मजीव उत्पादों का भी जैविक खेती में बड़े पैमाने पर प्रयोग किया जा रहा है। राष्ट्रीय जैविक खेती परियोजना तथा कृषि मंत्रालय की विभिन्न योजनाओं के अंतर्गत सब्जी व फल बाजार अवषिष्ट कम्पोस्ट उत्पादन इकाई, जीवाणु खाद उत्पादन इकाई तथा वर्मी कम्पोस्ट उत्पादन इकाई लगाने के लिए वित्तीय सहायता दी जाती है।

### जैविक खेती में उपादानों का प्रयोग

आज की जैविक खेती में अधिकाधिक जोर फार्म प्रबंधन पर दिया जाता है इस प्रबंधन के अंतर्गत पोषण प्रबंधन उपयुक्त फसल चक्र, फसल परिवर्तन बहुफसल व अंर्तफसल, दलहनी फसलों का अंर्तफसल रूप में समावेश, फसल अवशिष्ट प्रबंधन तथा फार्म पर उत्पादित कम्पोस्ट के अधिकाधिक प्रयोग द्वारा किया जाता है। पौध संरक्षण प्रक्रियाओं में आवास प्रबंधन, बहु व मिश्रित फसल, फसल चक्र, मित्र कीटों का प्रयोग तथा वानस्पतिक जैव कीटनाशी का प्रयोग प्रमुख है। इन सभी उपादानों की उपलब्धता पहले फार्म के संसाधनों द्वारा तथा आवश्यकता पड़ने पर सीमित मात्रा में बाजार से क्रय कर सुनिश्चित की जाती है।

**जैविक उपादान कृषि व्यवसाय**

जैविक खेती के उत्थान में जैविक उपादानों की महत्वपूर्ण भूमिका है। पारंपरिक खेती में जहाँ रासायनिक उपादानों का प्रयोग सीधे फसलों के लिए पोषण उपलब्धता तथा कीटनाशकों द्वारा नाशीजीवों का सीधे नियंत्रण करने के लिए किया जाता है वहीं जैविक खेती में उपादानों का प्रयोग मिट्टी को उर्वरा बनाने तथा ऐसा वातावरण बनाने में किया जाता है जिसमें नाशीजीव प्राकृतिक रूप से नियंत्रित होते हैं। इस सारी प्रक्रिया में यद्यपि उपादानों की मात्रा अहम नहीं है परंतु उनकी गुणवत्ता एक महत्वपूर्ण पहलू है। हाल के वर्षों में जैविक व पशु अवशिष्ट को अच्छी कम्पोस्ट में परिवर्तित करने तथा कीट नियंत्रण हेतु वानस्पतिक कीटनाशी काढ़े बनाने की अनेक तकनीकें विकसित की गई हैं। वर्मी कम्पोस्ट तकनीक का वृहत स्तर पर प्रयोग तथा नीम बीज अर्क की बढ़ती लोकप्रियता इन तकनीकों की प्रभावशीलता की द्योतक हैं। इन सब तकनीकों ने छोटे-छोटे ग्रामीण उद्योजकों के लिए अनेक संभावनाओं के द्वार खोल दिए हैं। ग्रामींण क्षेत्रों में इन उपादानों के उत्कृष्ट गुणवत्ता उत्पादन तथा किसानों को उचित मूल्य पर उनकी उपलब्धता का व्यापार रोजगार के अनेक अवसर प्रदान कर रहा है। जैविक खेती की बढ़ती जन जागृति तथा किसानों के बीच इसकी बढ़ती लोकप्रियता के कारण विभिन्न उत्पादकों ने अनेक प्रकार के जैविक उपादान बाजार में प्रस्तुत किये हैं। इनमें से जहाँ कुछ उपादान वैज्ञानिक रूप से जाँचे हुए और प्रभावी हैं वहीं अनेक प्रकार के उपादानों के पीछे कोई वैज्ञानिक व तकनीकी आधार नहीं है तथा उनकी गुणवत्ता, उपादेयता तथा प्रभावशीलता पर अनेक प्रश्न हैं।

ऐसी अनुचित प्रक्रियाओं व गैर मानकीय उपादानों से बचाने के लिए किसानों के बीच उपयुक्त जागृति विकसित किये जाने की आवश्यकता है। शासकीय स्तर पर कुछ जैविक उपादानो के उत्पादन व गुण नियंत्रण प्रक्रिया को नियंत्रित किया गया है। कुछ जैविक खाद तथा कुछ जीवाणु खादों को "खाद नियंत्रण आदेश" (Fertilizer Control Order) के अंतर्गत लाकर उनके मानक तथा गुण नियंत्रण प्रक्रियाएं निर्धारित की गई हैं। जैविक कीटनाशकों का उत्पादन व विपणन "केन्द्रीय कीटनाशक कानून" के अंतर्गत नियंत्रित किया जाता है।

प्रस्तुत पुस्तक में जिन प्रमुख जैविक व जीवाणु उपादानों के उत्पादन व गुण नियंत्रण प्रक्रिया का विवरण दिया जा रहा है उनका विवरण निम्नानुसार है।

१. जीवाणु खाद जैसे राइजोबियम, एजोटोबैक्टर, एजीस्पिरिलम तथा पी.एस.बी.
२. जैविक खाद जैसे गोबर खाद, कम्पोस्ट, नादेप कम्पोस्ट तथा वर्मी कम्पोस्ट
३. जैविक नाशीजीव प्रबंधन उपादान
४. बायोडायनेमिक व ई एम तकनीक तथा
५. किसानों द्वारा विकसित कुछ वानस्पतिक कीटनाशी अर्क

**जैविक उपादान उद्योग की स्थापना में सरकारी सहयोग**

जैविक उपादान जैसे कम्पोस्ट खाद तथा जीवाणु खाद इत्यादि जैविक खेती के लिए ही महत्वपूर्ण नहीं हैं बल्कि पारंपरिक विधा में समन्वित पोषण व कीट प्रबंधन में भी उनका महत्वपूर्ण स्थान है। ऐसे पर्यावरणीय मित्र उपादानों के उत्पादन व प्रयोग को बढ़ावा देने के लिए "राष्ट्रीय जैविक खेती परियोजना" के अंतर्गत एक वित्तीय सहायता कार्यक्रम की शुरूआत की गई है। इस कार्यक्रम के तहत् कुछ चुने हुए उपादानों की उत्पादन इकाइयाँ स्थापित करने पर कुल लागत के २५ से ३३ प्रतिशत तक का अनुदान दिया जाता है। यह सहायता सभी व्यक्तिगत उद्योजकों, राजिस्टर्ड संस्थाओं, कम्पनियों, सहकारी संस्थाओं, सरकारी विभाग व संस्थाओं तथा नगर पालिकाओं इत्यादि को ऐसी उत्पादन इकाइयों की स्थापना करने पर दी जाती है।

**यह सुविधा कैसे प्राप्त करें**

(क) **शासकीय विभाग व संस्थायें** - सभी सरकारी व अर्द्ध सरकारी संस्थायें, जैसे निगम, नगर पालिका आदि जो बैंकों से कर्ज नहीं प्राप्त कर सकती हैं सीधे कृषि व सहकारिता विभाग या राष्ट्रीय जैविक खेती केन्द्र को आवेदन कर सकती हैं।

(ख) **गैर सरकारी, निजी व व्यक्तिगत संस्थाएं** - इस श्रेणी की संस्थाओं व आवेदकों हेतु यह सुविधा बैंकों द्वारा ऋण संबंधित अंतिम चरण अनुदान प्रक्रिया के तहत् उपलब्ध है। इस प्रक्रिया के अंतर्गत उद्योजक या संस्था बैंक को ऋण

हेतु प्रस्ताव देती है। ऋण की उपलब्धता तथा स्वीकृति संबंधित बैंक के नियम व शर्तों के अधीन है। बैंक द्वारा ऋण स्वीकृति के पश्चात् जब उद्योजक ऋण राशि आहरित कर लेता है तब बैंक अनुदान हेतु नाबार्ड को आवेदन करता है। बैंक के आवेदन पर नाबार्ड ५० प्रतिशत अनुदान राशि का भुगतान तुरंत बैंक को कर देता है। शेष ५० प्रतिशत अनुदान राशि उत्पादन इकाई के उत्पादन शुरू करने पर तथा संयुक्त जाँच समिति के निरीक्षण के पश्चात् जारी की जाती है। पूरी अनुदान राशि संबंधित बैंक के पास तब तक धरोहर के रूप में सुरक्षित रहती है जब तक बैंक के पूरे ऋण का भुगतान नहीं हो जाता है। इस अंतरिम अवधि में बैंक अनुदान राशि के विरूद्ध ग्रहण राशि पर ब्याज नहीं वसूलता है। साधारणतया इस पूरे वित्तीय प्रबंधन में २५ से ३३ प्रतिशत हिस्सा उद्योजक का, ३४ से ५० प्रतिशत बैंक ऋण तथा २५ से ३३ प्रतिशत हिस्सा अनुदान का होता है। शुरूआत में ऋण राशि ६७ से ७५ प्रतिशत होती है जिसमें २५ से ३३ प्रतिशत अनुदान राशि समायोजित करने के बाद केवल ३४ से ५० प्रतिशत ऋण की अदायगी करनी होती है।

| क्र. | उत्पादन इकाई का प्रकार | उत्पादन क्षमता | अनुदान की मात्रा |
|---|---|---|---|
| १ | फल व सब्जी बाजार अवशिष्ट कम्पोस्ट | १०० टन प्रति दिन | कुल लागत का ३३ प्रतिशत या रु ६० लाख जो भी कम हो |
| २ | जैव उर्वरक व जैविक कीटनाशी | २०० टन प्रति वर्ष | कुल लागत का २५ प्रतिशत या रु ४० लाख जो भी कम हो |

### उर्वरक नियंत्रण आदेश के अंतर्गत पंजीकरण

अप्रैल २००६ से सभी जीवाणु खाद जैसे राइजोबियम, एजोटोबैक्टर, एजोस्पिरिलम तथा पी.एस.बी. तथा जैविक खाद जैसे शहरी कचरा कम्पोस्ट तथा वर्मीकम्पोस्ट उर्वरक नियंत्रण आदेश के अंतर्गत नियंत्रित हैं। सभी उत्पादकों, वितरकों तथा विक्रेताओं को इस आदेश के तहत् राज्य उर्वरक नियंत्रण अधिकारी के पास पंजीकरण कराना आवश्यक है। संबंधित राज्य सरकार के कृषि विभागों को इस आदेश के तहत् वाँछित शक्तियाँ प्रदान की गई हैं। सभी जिला एवं उप जिला कृषि अधिकारी इन आदेशों के तहत् उर्वरक निरीक्षक के रूप में प्राधिकृत हैं तथा उर्वरक नमूने आहरित कर विश्लेषण प्रयोगशालाओं को भेज सकते हैं। राष्ट्रीय जैविक खेती केन्द्र तथा हिसार, बैंगलोर, भुवनेश्वर, इम्फाल, जबलपुर तथा नागपुर स्थित क्षेत्रीय जैविक खेती केन्द्र इन आदेशों के अंतर्गत अधिकृत विश्लेषण प्रयोगशालाएं हैं। राज्य सरकारें अपनी स्वयं की भी प्रयोगशालाएं विकसित कर प्राधिकृत कर सकती हैं।

# जैव उर्वरक जीवाणु तथा उत्पादन तकनीक

जैव उर्वरक या जीवाणु टीका नम चूर्ण रूप में या द्रवीय रूप में ऐसे जीवित जीवाणु या फफूँद उत्पाद हैं जिन्हें बीज, पौध, मिट्टी या कम्पोस्ट गड्डों में प्रयोग करने पर विभिन्न प्रकार के पोषण तत्वों की उपलब्धता सुनिश्चित होती है और यह सारी पोषण तत्व परिवर्तन प्रक्रिया इन सूक्ष्म जीवों की जैविक क्रिया द्वारा संपन्न होती है। उच्च गुणवत्ता के जैव उर्वरक में निम्न गुण होने चाहिए

(क) वाँछित सूक्ष्मजीव अति उच्च मात्रा में पूरी जीवन सीमा अवधि तक उपलब्ध रहने चाहिए।
(ख) नमचूर्ण उत्पाद में ३०-५० प्रतिशत तक नमी होनी चाहिए।
(ग) सूक्ष्म जीवों की संख्या प्रति एक ग्राम या मि.ली. में $१०^{७}$ से $१०^{६}$ तक रहनी चाहिए।
(घ) उत्पाद अन्य अवाँछित सूक्ष्मजीव संदूषण से मुक्त होना चाहिए।
(ड.) वाँछित सूक्ष्मजीव अपने निर्दिष्ट गुण में प्रभावी होना चाहिए जैसे राइजोबियम ग्रंथियाँ बनाने में, एजोटोबैक्टर व एजोस्पिरिलम १०-१५ मि.ग्राम नत्रजन स्थिर करने में तथा पीएसबी फास्फेट घोलन में।
(च) उत्पाद की उचित जीवन सीमा होनी चाहिए।

इन सभी आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर इन उर्वरकों की एक उत्पादन तकनीक विकसित की गई है जिसके तीन प्रमुख अंग हैं।

(क) सूक्ष्मजीवों की पहचान व चयन
(ख) सूक्ष्मजीवों का वाँछित मात्रा में गुणन तथा
(ग) प्रयोग किये जा सकने वाले उत्पाद का निर्माण

### (क) सूक्ष्म जीव चयन

किसी भी जैव उर्वरक की प्रभावशीलता उसमें प्रयुक्त सूक्ष्मजीवों की प्रभावशीलता पर निर्भर करती है। चयनित प्रजाति न केवल अपने विशिष्ट गुण में प्रभावी होनी चाहिए अपितु वह मिट्टी व पौध जड़ों के आस-पास संख्या वृद्धि कर सकने व मिट्टी में उपस्थित अन्य सूक्ष्म जीवों से मुकाबला कर लंबे समय तक पौध जड़ों के आस-पास क्रियाशील रहने में भी सक्षम् होनी चाहिए। भारत में अनेक अनुसंधान संस्थाओं के सम्मिलित प्रयास से अनेक प्रकार के सूक्ष्म जीवों की प्रभावी प्रजातियाँ विकसित की गई हैं तथा संबंधित अनुसंधान संस्थानों या राष्ट्रीय व क्षेत्रीय जैविक खेती केन्द्रों से उपलब्ध हैं।

### (ख) सूक्ष्म जीवों का गुणन

जैव उर्वरक उत्पाद में इन जीवों की उच्च मात्रा सुनिश्चित करने हेतु इन सूक्ष्म जीवों को उपयुक्त परिस्थितियों में उगाया जाता है। सामान्यतया द्रवीय माध्यम में उपयुक्त परिस्थितियों में प्रति मि.ली. १० से १०० करोड़ तक जीवाणु प्राप्त किये जा सकते हैं। बड़ी मात्रा में गुणन हेतु काँच के फ्लास्क या बड़े फर्मेन्टरों का प्रयोग किया जाता है।

### (ग) (१) नम चूर्ण उत्पाद का निर्माण

द्रव माध्यम में सूक्ष्मजीवों की वाँछित आबादी प्राप्त कर लेने पर इस द्रव को वाहक चूर्ण (जैसे पीट, चारकोल या लिग्नाइट या वर्मीक्यूलाइट) के साथ मिलाकर उत्पाद का निर्माण किया जाता है। इस अवस्था में चूर्ण में ३०-४० प्रतिशत नमी के साथ ये जीवाणु लगभग ६-१२ महीने तक अपनी उच्च आबादी बनाये रखते हुए जीवित व प्रभावी रह सकते हैं। इस प्रकार तैयार नम चूर्ण को पॉलिथीन की थैलियों में भरकर सील कर दिया जाता है। इस पूरी प्रक्रिया में इस बात का ध्यान रखना जरूरी है कि सारी प्रक्रिया जीवाणुरहित निष्कीटित वातावरण में की जाये और किसी भी पद पर अन्य अवाँछित सूक्ष्म जीव उत्पाद में न आने पायें। साधारण अवस्थाओं में बने उत्पाद अधिक

से अधिक २-३ माह तक प्रभावी रहते हैं। जबकि निष्कीटित अवस्थाओं में बने उत्पाद ६-१२ माह तक प्रभावी रह सकते हैं।

(ग) (२) द्रवीय जैव उर्वरक निर्माण

द्रवीय जैव उर्वरकों के दो रूप हैं। प्रथम रूप में ऐसे जीवाणु जो स्पोर या सिस्ट बनाते हैं को द्रवीय माध्यम में उगाया जाता है और पूर्ण आबादी प्राप्त करने पर उन्हें स्पोर या सिस्ट में बदल दिया जाता है। इस अक्रियाशील अवस्था में ये जीवाणु लंबे समय तक विपरीत परिस्थितियों में भी जीवित रह सकते हैं।

दूसरे रूप में ऐसे जीवाणु जो अपने क्रियाशील रूप में ही रहते हैं को गुणन के समय कुछ विशिष्ट रसायनों के साथ मिलाया जाता है तथा प्राप्त द्रव को बोतलों में भर दिया जाता है। इस अवस्था में प्रति मि.ली. १०० करोड़ तक जीवाणु तादाद लंबे समय तक बनाये रखी जा सकती है।

### जैव उर्वरक जीवाणु

**एजोस्पिरिलम**

एक कोशिकीय लगभग २.१ से ३.८ माइक्रोन लम्बी व १ माइक्रोन मोटी कोशिकाएं जो सीधी या थोड़ी सी मुड़ी हुई छड़ जैसी होती हैं। दोनो सिरे सामान्यतया नुकीले होते हैं। प्रत्येक कोशिका में पौलीबीटा हाइड्रोक्सी ब्यूटायरेट ग्रेन्यूल स्पष्ट दिखता है। पुराने क्षारीय कल्चर या अत्यधिक ऑक्सीजन की उपस्थिति में कोशिकाएं फूली हुई अनेक प्रकार के आकारों में दिखती हैं। ग्राम निगेटिव से ग्राम विभिन्न, द्रव माध्यम में एक फ्लेजलिम द्वारा चलायमान। ठोस माध्यम पर कई फेलैजीला भी दिख सकते हैं। आक्सीजन की अनुपस्थिति में नत्रजन स्थिरीकरण में सक्षम्। नत्रजन की उपस्थिति में तेजी से बढ़ती हैं। उपयुक्त तापमान ३५-३७° से. सेमीसॉलिड नत्रजन से रहित NFB माध्यम में सतह से कुछ मि.मी. नीचे एक पैलिकल निर्माण करती हैं। बी एम एंस अगर माध्यम पर एजोस्पिरिम गुलाबी रंग की कॉलोनी बनाती हैं।

**एजोटोबैक्टर**

बड़ी अंडाकार कोशिकाएं १.५ से २ माइक्रोन चौड़ी तथा ३ से ६ माइक्रोने तक लम्बी। आकार में गोल, अंडाकार से लेकर छड़ रूपी। कभी-कभी कुछ कोशिकाएं आपस में जुड़कर चेन जैसी रचना भी बनाती हैं। ग्राम निगेटिव तथा पूरे शरीर पर स्थित फलैजीला द्वारा चलायमान। कम से लेकर अधिक ऑक्सीजन की अवस्था में रहने योग्य। सामान्यतया उपयुक्त तापमान पर प्रति एक ग्राम शक्कर का उपयोग कर १० मि.ग्राम नत्रजन का स्थिरीकरण करती है। नत्रजन रहित ठोस जैनसन माध्यम पर रंगहीन उभरी हुई गोलाकार कॉलोनी बनाती हैं जो ३-४ दिन बाद धीरे-धीरे गहरे भूरे काले रंग की कॉलोनी में परिवर्तित हो जाती है।

**राइजोबियम**

छोटी गोलाकार छड़ जैसी कोशिकाएं जो लगभग ०.६ से १.२ माइक्रोन चौड़ी तथा १.२ से ३ माइक्रोन लंबी होती हैं। प्रत्येक कोशिका में एक पॉलीबीटा हाइड्रोक्सी ग्रेन्यूल उपस्थित, ग्राम निगेटिव, एक पोलर या सब पोलर या २-६ पेरीट्राइकस फ्लैजिलम से चलायमान। यीस्ट-मैनीटाल-अगर माध्यम पर गोल उभरी हुई पारभासी कॉलोनी बनाते हैं। मुक्त जीवी अवस्था में नत्रजन स्थिरीकरण नहीं कर सकती है परंतु लेग्यूम जाति के पौधों में ग्रंथि बनाकर नत्रजन स्थिरीकरण में सक्षम्। अलग-अलग लेग्यूम फसलों में राइजोबियम की अलग-अलग प्रजातियॉं होती हैं। कुछ प्रजातियॉं केवल कुछ विशिष्ट लेग्यूम पौधे में ही ग्रंथि बनाती हैं परंतु कुछ प्रजातियॉं कई प्रकार की लेग्यूम पौधों में समान रूप से ग्रंथि बना सकती हैं।

**पी.एस.बी.**

लगभग सभी अम्ल उत्पादन करने वाले सूक्ष्म जीव फास्फेट घोलन का कार्य कर सकते हैं परंतु ऐसे सूक्ष्मजीव जो अम्ल उत्पादन के साथ-साथ पौध जड़ों के आस-पास प्रभावी रूप में कार्य करते हैं और पौधों पर तथा अन्य सूक्ष्मजीवों पर कोई विपरीत प्रभाव न डालें उन्हें पी. एस. बी. के रूप में प्रयोग किया जाता है। इन जीवों में प्रमुख पी.एस.बी. जीवाणु हैं

बैसिलस पॉलिमिक्सा, बै. मैगाथिरियम, बै. सबटिलिस, स्यूडोमोनास स्ट्रीएटा इत्यादि। कुछ फफूंदी सूक्ष्मजीव जैसे पैनीसिलियम डिजीटेटम तथा एस्परजिलस एवामोरी भी उत्कृष्ट पी.एस.बी. हो सकते हैं।

## जैव उर्वरक उत्पादन तकनीक

- **भवन व स्थान आवश्यकता**
- उद्योग की उत्पादन क्षमता के आधार पर २५०० वर्ग फुट से लेकर ६००० वर्ग फुट भवन की आवश्यकता होती है। उत्पादन इकाई के भवन की निम्नानुसार आवश्यकताएं हैं।
- **मुख्य प्रयोगशाला** - इस कमरे में सभी सामान्य उपकरण स्थापित किये जाते हैं। मुख्य प्रयोगशाला में पानी के कुंड (वाशबेसिन) जल निकासी की सुविधा तथा कुछ प्रमुख उपकरणों हेतु ३ फेज बिजली के प्लगों की उपलब्धता होनी चाहिए।
- **संरोपण कक्ष** - यह कक्ष पूर्ण से जीवाणु रहित रखा जाता है अतः इसकी खिड़कियाँ दरवाजे इत्यादि बंद रखे जाते हैं। एयर कंडीशनर की सुविधा से कार्य करना आसान होता है। प्रवेश द्वार दो दरवाजों वाला रखा जाता है। इस कक्ष में प्रमुखतया लेमिनार फ्लो यंत्र स्थापित किया जाता है तथा एक पात्र से दूसरे पात्र में जीवाणुओं को इसी कक्ष में जीवाणु रहित वातावरण में संरोपित किया जाता है।
- **फर्मेंटर कक्ष** - यह कक्ष जीवाणुओं के गुणन यंत्रों के लिए है। उत्पादन क्षमता के अनुरूप इस कक्ष में २५-४० छोटे फर्मेंटर तथा २ से ४ बड़े फर्मेंटर स्थापित किए जाते हैं। मातृ कल्चर उत्पादन हेतु १-२ शेकर भी रखे जाते हैं। तापक्रम नियंत्रित करने के लिए एयर कंडीशनर तथा हीटर भी लगाये जाते हैं।
- **तैयारी कक्ष** - गुणन हेतु द्रव माध्यम की तैयारी तथा उनके निष्कीटन का कार्य इसी कक्ष में किया जाता है।
- **उत्पादन कक्ष** - जीवाणु द्रव को वाहक में मिलाने तथा पैकिंग करने तथा द्रव उत्पाद को बोतलों में भरने का कार्य उत्पादन कक्ष में किया जाता है।
- **अन्य सुविधा कक्ष** - इन सबके अलावा कुछ अन्य कक्षों की भी आवश्यकता होगी जिनमें प्रमुख हैं।
  (क) कार्यालय कक्ष
  (ख) कच्चा माल भंडार
  (ग) जैव उर्वरक भंडार
  (घ) रसायन व अन्य उपादान भंडार

## अन्य वाँछित सुविधाएं

(क) ३ फेज बिजली सप्लाई
(ख) साफ व हल्के पानी की उपलब्धता
(ग) उचित जल व गंदगी निकासी
(घ) परिवहन हेतु सड़क तक पहुँच

आवश्यक उपकरण, काँच का सामान तथा प्रयोगशाला आवश्यकताऐं

प्रयोगशाला उपकरण

१. छोटा वर्टीकल ऑटोक्लेव
२. हॉट एयर ओवन
३. जल आसवन यंत्र
४. इलेक्ट्रानिक तुलायें
५. रेफ्रीजिरेटर
६. बी ओ डी इन्क्यूबेटर
७. लेमिनार वर्क फ्लो स्टेशन

८. रोटरी शेकर
९. माइक्रोस्कोप - फेज कन्ट्रास्ट सुविधा के साथ
१०. हवा दाब यंत्र
११. एयर कंडीशनर
१२. पी. एच. मीटर
१३. स्पैक्ट्रोफोटोमीटर
१४. वोर्टेक्स मिक्सर
१५. मैग्नेनिक स्टरर
१६. माइक्रोलिटर पिपेट विभिन्न क्षमताओं के

**कॉच के उपकरण व मशीनें**

टेस्ट ट्यूब
मैक कार्टनी बोतल
पैट्री डिश
कोनिकल फ्लास्क
पिपेट

**अन्य प्रयोगशाला सहायक उपकरण**

बाल्टियॉं
रूई कपास
कॉच की रूई
धागा
एल्यूमीनियम पन्नी
हीटर, हॉट प्लेट, गैस स्टोव
बुन्सन बर्नर, संरोपण लूप
टेस्ट ट्यूब स्टैंड
नपना गिलास (विभिन्न क्षमताओं के)
बीकर (विभिन्न क्षमताओं के)
माइक्रोटिप

**उत्पादन उपकरण व मशीनें**

बड़े आटोक्लेव
मातृ कल्चर फर्मेंटर
सीड फर्मेंटर
बड़े फर्मेंटर
हवा दाब यंत्र
एयर कंडीशनर
फर्मेंटर शीतन यंत्र
पैरीस्टेटिक पम्प, बॉयलर इत्यादि

**पैकेजिंग यंत्र**

आटोमैटिक पैकेजिंग मशीन
आटोमैटिक बॉटल फिलिंग मशीन

हीट सीलर
तुलायें
लेबल मशीन
कार्ड बोर्ड बाक्स पैकिंग मशीन
पॉलिथीन बैग
सीलिंग टेप

यदि उत्पादन बड़े पैमाने पर किया जा रहा है तो पूरी पैकेजिंग प्रक्रिया स्वचालित यंत्रों द्वारा नियंत्रित की जा सकती है। वाहक आधारित नम चूर्ण उत्पाद हेतु पाउडर व द्रव पैकेजिंग मशीन का सम्मिलित रूप प्रयोग किया जा सकता है। इस मशीन द्वारा निष्कीटित वाहक तथा जीवाणु द्रव निश्चित मात्रा में नियंत्रित वातावरण में पॉलिथीन बैग में भरा जाता है। वाहक व द्रव को मिलाने हेतु भरे हुए बैग को स्वालित यंत्रों द्वारा उल्टा पलटा जाता है।

**सूक्ष्म जीव गुणन**

जैव उर्वरक उत्पादन प्रक्रिया में वॉछित जीवाणुओं को एक स्लान्ट से लेकर बड़े फर्मेंटर तक क्रमबद्ध तरीके से गुणन किया जाता है। पूरी गुणन प्रक्रिया को चित्र में दर्शाया गया है।
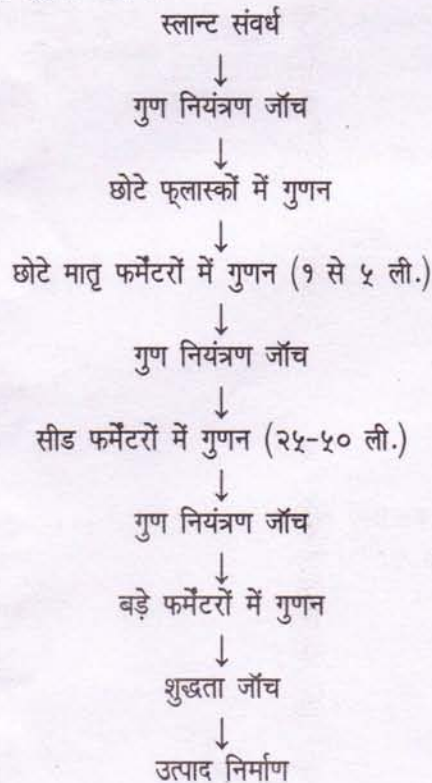
**जैव उर्वरक जीवाणुओं के तीव्र गुणन हेतु वॉछित आवश्यकताएं**

जैव उर्वरकों में प्रयुक्त लगभग सभी जीवाणु आक्सीजन की प्रचुर उपलब्धता में सतह पर गुणन करते हैं। यद्यपि एजोस्पिरिलम नत्रजन की अनुपस्थिति में कम आक्सीजन अवस्थाओं में भी गुणन में सक्षम् हैं परंतु नत्रजन उपलब्धता की स्थितियों में तीव्र गुणन हेतु आक्सीजन की प्रचुर उपलब्धता आवश्यक है। उपयुक्त तापमान की आवश्यकताएं अलग-अलग जीवाणुओं के लिए अलग-अलग हैं जो कि साधारणतया २८ से ३५° से. तक होती है। राइजोबियम २८ से ३०° से. पर तेजी से गुणन करते हैं। एजोटोबैक्टर व पी.एस.बी. जीवाणुओं हेतु ३० से ३२° से. तापमान उपयुक्त है तथा एजोस्पिरिलम

३४ से ३५° से. तापमान पर अच्छी तरह गुणन करता है। उपयुक्त तापमान प्रदान करने हेतु यह आवश्यक है कि जिस स्थान पर गुणन प्रक्रिया की जा रही है उस कमरे या स्थान का तापमान निर्धारित स्तर पर नियंत्रित रखा जाये।
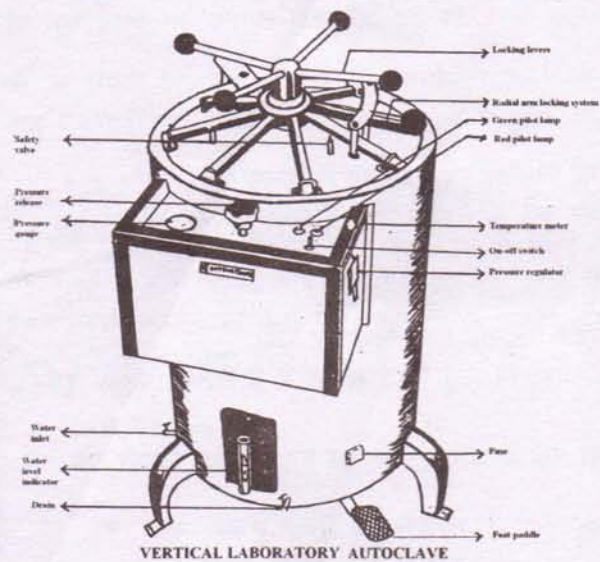
**Vertical Autoclave** **Laminar Air Flow Work Station**
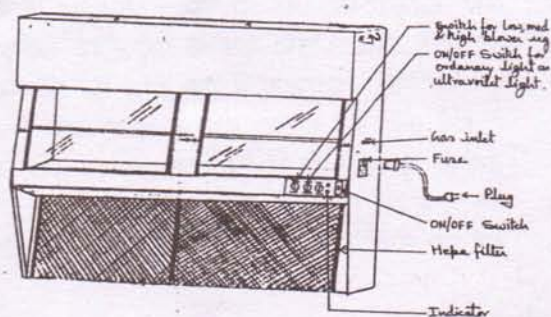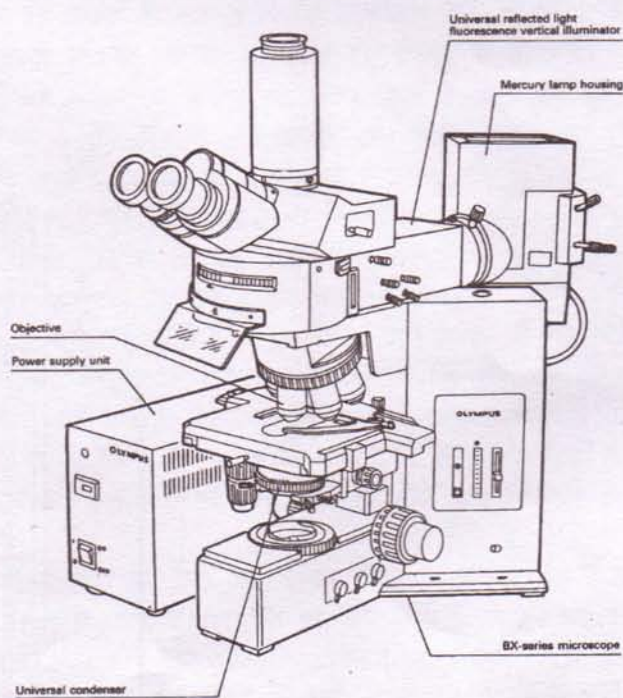
**Phase Contrast Microscope**

तापक्रम के बाद उपयुक्त गुणन हेतु दूसरी सबसे महत्वपूर्ण आवश्यकता है आक्सीजन की प्रचुर मात्रा में उपलब्धता तथा अधिक से अधिक सतह का उपलब्ध होना। ये दोनो आवश्यकताएं या तो गुणन पात्र के लगातार हिलाते रहने से या गुणन पात्र में तीव्र दाब पर हवा प्रवाहित करने से पूरी की जा सकती हैं। बड़े फर्मेंटरों में हवा के बहाव को नियंत्रित कर इन आवश्यकताओं की पूर्ति की जाती है। उपयुक्त गुणन हेतु प्रति एक लीटर द्रव हेतु प्रति घंटा लगभग १० लीटर हवा की आवश्यकता होती है।

### मातृ द्रव संवर्ध

जीवाणुओं के क्रमवार गुणन में सर्वप्रथम चरण है मातृ द्रव संवर्ध का निर्माण। पूरी प्रक्रिया निम्नानुसार है:

१. छोटे कोनिकल फ्लास्कों में वाँछित द्रव Medium भरकर रूई के ढ़क्कन लगा दें सभी फ्लास्क लगभग ५०-६० प्रतिशत तक ही भरे जाने चाहिए।
२. सभी फ्लास्कों को १२१° से. पर लगभग २० मिनट तक आटोक्लेव करें।
३. ठंडा होने पर ऐसे सभी फ्लास्क मातृ संवर्ध स्लान्ट के साथ लेमिनार फ्लो टेबल पर रखें।
४. पूर्ण निष्कीटित वातावरण में एक टीका लूप की मदद् से थोड़ा सा मातृ संवर्ध स्लान्ट से निकालकर प्रत्येक फ्लास्क में डालें तथा रूई के प्लग ठीक से वापस लगा दें।
५. संरोपित फ्लास्कों को नियंत्रित तापमान पर शेकर यंत्र पर रख दें और ५-१० दिन तक लगातार हिलाते रहें।
६. गुण व शुद्धता की जाँच करें।
७. मातृ द्रव संवर्ध छोटे मातृ फर्मेन्टरों में प्रयोग हेतु तैयार हैं।

### मातृ फर्मेंटरों में गुणन

पूरी गुणन प्रक्रिया का अगला चरण है मातृ फर्मेंटरों में गुणन। आवष्यकतानुसार ये फर्मेंटर १-२ लीटर क्षमता से लेकर १०-२० लीटर क्षमता तक के हो सकते हैं। फर्मेंटर मूलतः ऐसे यंत्र हैं जिनमें द्रव वाहक निष्कीटित कर जीवाणुओं का गुणन किया जाता है। गुणन प्रक्रिया को सुचारू से चलाने के लिए जीवाणु रहित हवा का प्रवाह तथा लगातार हिलाने का प्रबंध होता है। छोटे फर्मेंटरों का निष्कीटन उन्हें आटोक्लेव कर किया जाता है जबकि बड़े फर्मेंटरों को उच्च दाब पर भाप द्वारा निष्कीटित किया जाता है। निष्कीटन के पश्चात् जब वाहक का तापमान सामान्य हो जाये तब इसे ५ प्रतिशत की दर से मातृ संवर्ध द्वारा संरोपित किया जाता है।

Figure 1 Diagramatic plan of simple fermentor. Inset, metal fermentor drum supplied by Agricultural Laboratories Pty, NSW, Australia
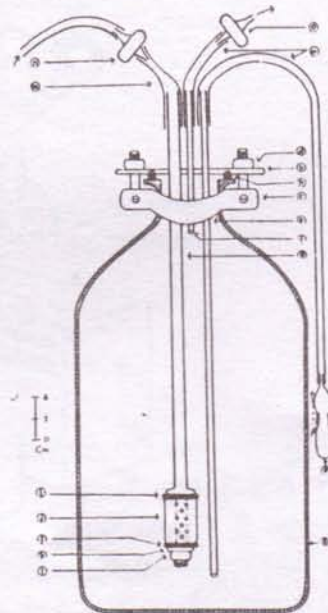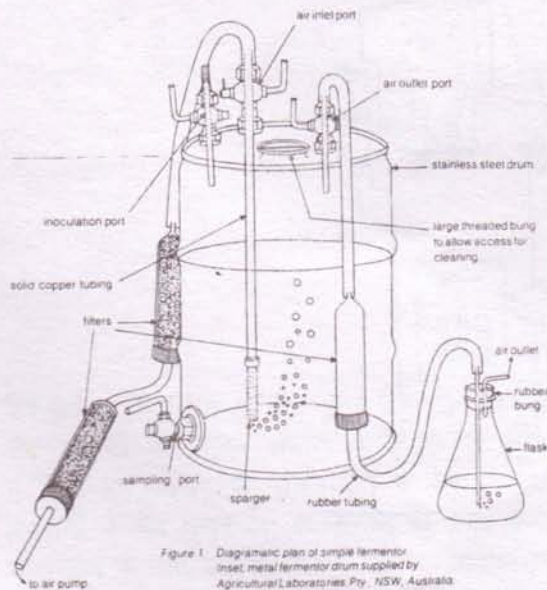
FIG. I MODIFIED PORTABLE FERMENTOR

### गुणन अवलोकन तथा गुण जाँच

सूक्ष्म जीव के प्रकार, मातृ संवर्ध की संरोपित मात्रा, हवा का प्रवाह तथा तापमान के अनुसार पूरी गुणन प्रक्रिया में लगभग ४८ घंटे से लेकर ७ दिन का समय लगता है। गुणन प्रक्रिया का लक्ष्य होता है प्रति एक मि.ली. लगभग १० करोड़ से १ अरब जीवाणु। धीरे उगने वाले राइज़ोबियम जीवाणु यदि १ प्रतिशत की दर से संरोपित किये जायें तो गुणन प्रक्रिया को पूर्ण होने में लगभग ७-८ दिन का समय लगेगा। जबकि तेजी से उगने वाले राइजोबियम के साथ यह प्रक्रिया ३-५ दिन में पूरी की जा सकती है। एक प्रतिशत की दर से संरोपण करने पर एजोटोबैक्टर जीवाणु ७ दिन, पी.एस.बी. जीवाणु ३-५ दिन तथा एजोस्पिरिलम जीवाणु २-४ दिन के समय में गुणन प्रक्रिया पूरी करते हैं।

गुणन प्रक्रिया की जाँच हेतु समय-समय पर नमूना आहरित कर उसकी शुद्वता तथा जीवाणु संख्या का आंकलन किया जाता है। धीरे गुणन करने वाले जीवाणुओं के मामले में पहला नमूना संरोपण के ४८-७२ घंटे बाद तथा तेज गुणन करने वाले जीवाणुओं में २४-४८ घंटे बाद निकाला जाता है। इसके बाद प्रत्येक २४-४८ घंटे के अंतराल पर नमूने आहरित किये जाते हैं। नमूना आहरण का कार्य पूरी सावधानी से जीवाणु विरहित अवस्था में किया जाना चाहिए। गुणन व शुद्वता जाँच हेतु निम्न परीक्षण आवश्यक है:

- पी.एच. मान
- ग्राम स्टेनिंग द्वारा संदूषण जाँच
- कुल जीवाणु संख्या का आंकलन
- स्पैक्ट्रोफोटोमीटर द्वारा प्रकाशीय घनत्व जाँच तथा
- अगर-वाहक प्लेटों में जीवाणु उगाकर जाँच

यदि इन फर्मेंटरों के उत्पाद को बड़े फर्मेंटरों मं संरोपण हेतु प्रयोग किया जाना है तो पूरी जाँच प्रक्रिया का पालन करें और पूर्ण रूप से शुद्व पाने पर ही प्रयोग करें।

### बड़े फर्मेंटरों में जीवाणु द्रव उत्पादन

बड़े पैमाने पर उत्पादन हेतु बड़े-बड़े फर्मेंटरों में जीवाणु द्रव बनाया जाता है। उत्पादन की आवश्यकता के अनुरूप फर्मेंटर १०० से २००० लीटर क्षमता तक के होते हैं। ये सभी फर्मेंटर उच्च कोटि की स्टेनलेस स्टील से बने होते हैं तथा उच्च ताप की भाप का लगभग ४५ पाउंड प्रति इंच तक का दाब सहन में सक्षम् होते हैं। फर्मेंटर मूलतः स्टेनलेस स्टील के ऐसे बंद पात्र होते हैं जो उच्च ताप व दाब पर द्रवीय वाहक का निष्कीटन कर सकें। जीवाणुओं की उचित बढ़वार हेतु इन पात्रों में जीवाणु विरहित हवा के प्रवाह, द्रव को लगातार हिलाने तथा तापमान को एक निश्चित स्तर पर बनाये रखने का भी प्रबंध होता है। पात्र में द्रव भरने व सफाई हेतु एक ढ़क्कन तथा भाप, हवा व संरोपण द्रव हेतु पाइप लगे होते हैं। सभी पाइप मुख टैफलोन सील वाल्वों द्वारा सुरक्षित होते हैं। द्रव को लगातार हिलाने के लिए यॉत्रिक विलोडक (Mechenical stirrer) हवा के प्रवाह हेतु वायु वितरक नलिकाएं तथा तापमान नियंत्रण हेतु शीत जल नलिकाओं का भी प्रबंध फर्मेंटर पात्र के अंदर होता है। ३०० लीटर से छोटे फर्मेंटरों में यॉत्रिक विलोडक की आवश्यकता नहीं होती है। इनमें द्रव को हिलाने का कार्य हवा के तीव्र प्रवाह द्वारा किया जा सकता है जबकि बड़े फर्मेंटरों में यॉत्रिक विलोडकों का होना आवश्यक है। उपयुक्त गुणवत्ता के शुद्व जीवाणु द्रव उत्पादन हेतु फर्मेंटरों का उच्च कोटि का होना अति आवश्यक है।

फर्मेंटर पात्र को अच्छी प्रकार धोकर साफ करें तथा जल भरकर वॉछित जीवाणु माध्यम तैयार करें। पी.एच. जाँच पश्चात् सभी ढ़क्कन व वाल्व बंद कर दें। उच्च ताप व उच्च दाब पर भाप प्रवाहित कर द्रव को जीवाणु विरहित (Sterilization) करें। लगभग २० पाउंड प्रति इंच भाप दाब तथा १२१° से. तापमान पर १ घंटे में पूरा फर्मेंटर द्रव सहित जीवाणु विरहित हो जाता है। पूरी जीवाणु विरहन प्रक्रिया में यॉत्रिक विलोडक द्वारा द्रव को लगातार हिलाते जाना अतिआवश्यक है। जीवाणु विरहन प्रक्रिया पूरी होने पर भाप प्रवाह रोक दें और द्रव को ठंडा होने दें। ध्यान रहे इस दौरान किसी भी वाल्व को न खोलें। ठंडा करने हेतु शीत नलिकाओं द्वारा टंडे जल का प्रवाह किया जा सकता है। जब द्रव का तापमान सामान्य

हो जाये तो उसमें हवा का प्रवाह शुरू कर दें। **जीवाणु विरहित हवा के प्रवाह हेतु** हवा को उच्च दाब पर विशिष्ट हवा छलनियों से गुजारा जाता है। अब फर्मेंटर संरोपण हेतु तैयार है। आवश्यकता एवं उपलब्धता के अनुसार कुल द्रव की ०.१ से १ प्रतिशत तक की मात्रा के मातृ संवर्ध से संरोपित करें।
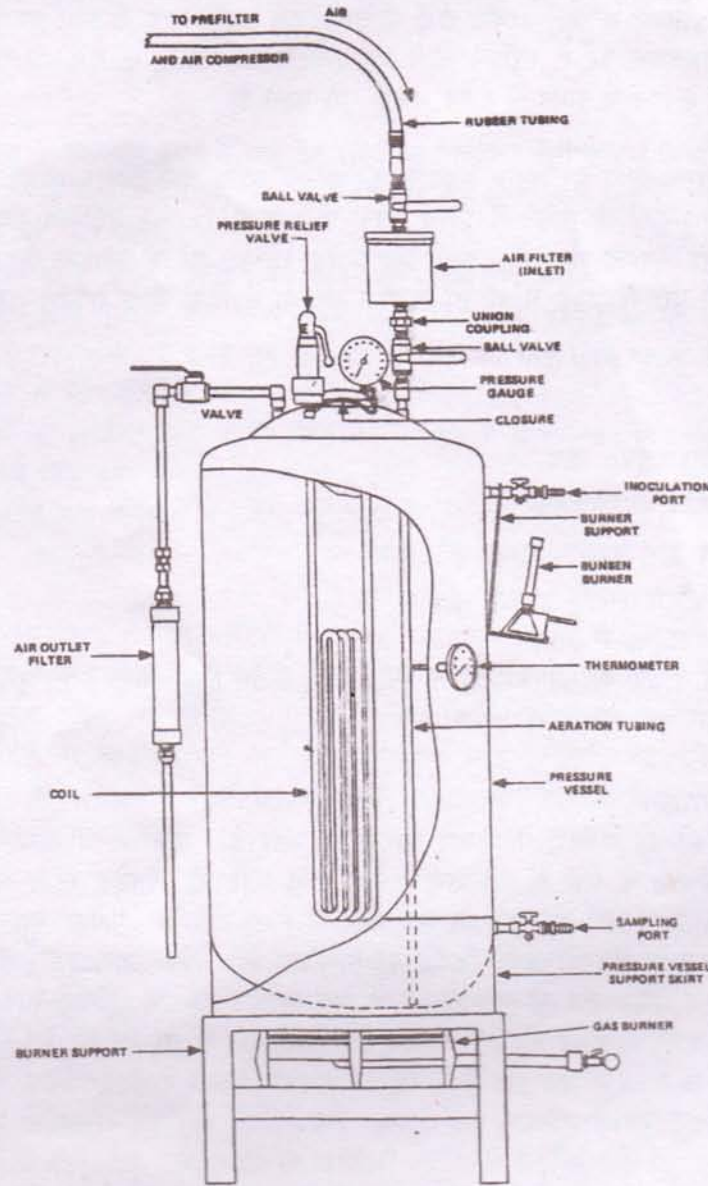
संरोपण द्रव की मात्रा तथा गुणन समय

साधारणतया ०.१ से १ प्रतिशत मात्रा से संरोपण करने पर फर्मेंटर द्रव में प्रति मि.ली. एक से दस लाख जीवाणु उपलब्ध हो जाते हैं। प्रत्येक जीवाणु का अपना विशिष्ट औसत गुणन काल (समय जिसमें एक जीवाणु दो में परिवर्तित हों) होता है। मातृ द्रव की आयु, तापमान, पोषणों की उपलब्धता, हवा का प्रवाह तथा मातृ संवर्ध की मात्रा का गुणन प्रक्रिया में विशिष्ट स्थान है। एक भी कारक के परिवर्तन से पूरी गुणन प्रक्रिया प्रभावित होती है। यदि मातृ संवर्ध में प्रति मि.ली. १ अरब क्रियाशील जीवाणु हैं तो फर्मेंटर द्रव में इसी स्तर को प्राप्त करने में निम्नानुसार समय लगेगा

| जीवाणु का प्रकार | वॉछित मात्रा प्राप्त होने में लगने वाला समय घंटों में | |
|---|---|---|
| | १ प्रतिशत मातृ द्रव प्रयोग करने पर | ५ प्रतिशत मातृ द्रव प्रयोग करने पर |
| २-४ घंटे के औसत गुणन काल वाले जीवाणु | २५-५२ घंटे | १८-३६ घंटे |
| ६-१२ घंटे के औसत गुणन काल जीवाणु | ७८-१५६ घंटे | ५४-१०८ घंटे |

उच्च क्षमता के फर्मेंटरों में ५-६ प्रतिशत तक मातृ संवर्ध का प्रयोग किया जाता है। जबकि छोटे तथा मातृ संवर्ध फर्मेंटरों में ०.१ से १ प्रतिशत मातृ संवर्ध का प्रयोग किया जाना चाहिए। मातृ संवर्ध की मात्रा कम रखने से यद्यपि गुणन काल में वृद्धि होती है परंतु जीवाणु द्रव की शुद्धता सुनिश्चित करने हेतु दीर्घ गुणन काल लाभकारी है। आमतौर पर अधिकांश संदूषण जीवाणु तीव्र गुणन करते हैं और १२ से २४ घंटे के भीतर उनकी उपस्थिति की जॉच सूक्ष्मदर्शी द्वारा की जा सकती है तथा गुणन प्रक्रिया पूरी होने से पहले ही फर्मेंटर द्रव की शुद्धता जॉच पूरी की जा सकती है।

जीवाणु द्रव की गुण व शुद्धता जॉच

गुणन व शुद्धता जॉच हेतु निम्न परीक्षण आवश्यक है:

- पी.एच. मान
- ग्राम स्टेनिंग द्वारा संदूषण जॉच
- कुल जीवाणु संख्या का आंकलन
- स्पैक्ट्रोफोटोमीटर द्वारा प्रकाशीय घनत्व जॉच
- तथा अगर-वाहक प्लेटों में जीवाणु उगाकर जॉच

उत्पाद निर्माण

उत्पाद निर्माण हेतु वॉछित सांद्रता के जीवाणु द्रव को निष्कीटित वाहक चूर्ण के साथ मिलाया जाता है। चूँकि द्रवीय अवस्था में जीवाणुओं की उच्चतम् मात्रा को दीर्घ समय तक नहीं रखा जा सकता है इसलिए यह प्रक्रिया एक महत्वपूर्ण चरण है। अंतिम उत्पाद में जीवाणुओं की उपयुक्त मात्रा प्राप्त करने हेतु आवश्यक है कि वाहक महीन चूर्ण रूप में हो, उसमें जीवाणुओं को प्रभावित करने वाले कोई रसायनिक अंश न हों तथा अन्य संदूषण जीवाणुओं से मुक्त हो। बीज उपचार हेतु आवश्यक है कि वाहक चूर्ण बहुत महीन हो। अनुसंधान द्वारा यद्यपि अनेक प्रकार के वाहकों का चयन किया गया है परंतु इनमें से पीट, पीट मिट्टी, लिग्नाइट तथा लकड़ी कोयला चूर्ण सर्वाधिक प्रचलित वाहक हैं।

आदर्श रूप से एक वाहक में निम्न गुणों का होना आवश्यक है।

1. वाहक महीन चूर्ण रूप में होना चाहिए तथा ७५ प्रतिशत चूर्ण कण ७५ माइक्रोन की छलनी को पार कर जाने चाहिए।
2. वाहक का पी.एच. मान ६.५ से ७.० तक होना चाहिए। पीट तथा लिग्नाइट आमतौर पर अम्लीय होते हैं अतः उनका पी.एच.मान वॉछित स्तर पर लाने के लिए खडिया या चूना पाउडर का प्रयोग किया जाता है।
3. चूर्ण रूप में वाहक की जल संग्रहण क्षमता १०० प्रतिशत से अधिक होनी चाहिए।
4. वाहक में कोई भी विषैले अंश नहीं होने चाहिए तथा
5. वाहक आसानी से निष्कीटित किया जा सके।

**वाहक का निष्कीटन**

भारत में अधिकांश उत्पादक वाहक को निष्कीटित किये बिना ही सीधे शुद्ध जीवाणु द्रव के साथ मिला देते हैं। इस प्रक्रिया में वॉछित जीवाणुओं के साथ कुछ अवॉछित संदूषण जीवाणु भी उत्पाद में आ जाते हैं। ऐसे उत्पादों को यदि २५° से. तापमान पर भंडारित किया जाये तो इन संदूषण जीवाणुओं की उपस्थिति से ३-४ माह तक कोई खतरा नहीं है। परंतु यदि इन उत्पाद पैकेटों को २८-३२° से. तापमान पर रखा जाये तो संदूषण जीवाणु तेजी से बढ़ने लगते हैं और २-३ माह में उनकी संख्या जैव उर्वरक जीवाणुओं की संख्या के बराबर हो जाती है और उत्पाद की प्रभावशीलता समाप्त हो जाती है। अगर ऐसे उत्पादों को ३४° से. या उससे अधिक तापमान पर भंडारित किया जाये तो ५-६ दिन में ही उत्पाद की गुणवत्ता नष्ट हो जाती है।

ऐसी अवस्थाओं में जहाँ उच्च तापमान (२५° से. से अधिक) एक सामान्य बात है वहाँ वाहक का निष्कीटन और पूरी उत्पादन प्रक्रिया का जीवाणु विरहित वातावरण में किया जाना अत्यंत आवश्यक है। निष्कीटित वाहक जब तक ही जीवाणु विरहित रहेगा जब तक कि उसे उसी पात्र में बंद अवस्था में न रखा जाये जिसमें उसे निष्कीटित किया गया है। इसके लिए सबसे उचित तो यही रहेगा कि वाहक को पैकेटों में भरकर ही निष्कीटित किया जाये और निष्कीटन पश्चात् उसमें जीवाणु द्रव डाला जाये।

**वाहक का पैकेटों में निष्कीटन**

सबसे पहले इस बात की गणना करें कि अंतिम उत्पाद हेतु प्रति पैकेट वाहक व जीवाणु द्रव की कितनी मात्रा की आवश्यकता होगी। उदाहरण के लिए यदि वाहक जल संग्रहण क्षमता १२० प्रतिशत है तो २०० ग्राम का पैकेट बनाने हेतु ११० ग्राम वाहक व ६० मि.ली. जीवाणु द्रव की आवश्यकता होगी। यदि यह गणना ठीक है तो २०० ग्राम के पैकेट बनाने हेतु प्रत्येक बैग में ११० ग्राम वाहक भरें और पैकेट को सील कर दें। चारकोल चूर्ण द्रव को अपने आप सोख लेता है परंतु लिग्नाइट अपने आप द्रव को नहीं सोखता इसके लिए आवश्यक है कि शुद्ध लिग्नाइट के स्थान पर चारकोल, लिग्नाइट व डोलोमाइट का मिश्रण (२०:७५:५ अनुपात में) वाहक के रूप में प्रयोग करें। प्लास्टिक बैग पालिप्रोपिलीन के होने चाहिए। पॉलिप्रोपिलिन १२१° से. तापमान व आटोक्लेविंग को सहन करने में सक्षम् है।

वाहक को बैग में भरने से पूर्व उसमें लगभग १० प्रतिशत जल मिला दें। इससे निष्कीटन अच्छी प्रकार होगा। उपयुक्त मात्रा में जलयुक्त वाहक बैग में भरें और एक कोने में एक कपास की बत्ती रखकर सील कर दें। यह आटोक्लेविंग के दौरान भाप व हवा के सुचारू आवागमन के लिए आवश्यक है। इन बैगों को एक जूट बोरे में भरकर आटोक्लेव करें १२१° से. तापमान पर लगभग एक घंटे में सभी पैकेट जीवाणु विरहित हो जाते हैं। आटोक्लेव को बंदकर उसे ठंडा होने दें भाप को धीरे-धीरे निकलने दें और रात भर के लिए छोड़ दें। ठंडा होने पर बैग को बाहर निकालें और बत्ती निकालकर छेद को सील कर दें। इस अवस्था में बैग लंबे समय तक रखा जा सकता है। चूँकि जैव उर्वरक उत्पादन बुवाई पूर्व महीनों में अधिक होता है। अतः जब उत्पादन न हो रहा हो तब वाहक बैग तैयार करें और निष्कीटन कर भंडारित कर लें।

**वाहक बैगों में जीवाणु द्रव संरोपण**

उत्पाद बनाने हेतु निष्कीटित वाहक थैलों में उचित मात्रा में जीवाणु द्रव संरोपित करें। संरोपण कार्य जीवाणु विरहित तकनीक से किया जाना चाहिए। इस कार्य हेतु वॉछित स्वचालित मशीन की आवश्यकता होगी।

**जैव उर्वरकों की प्रयोग विधि**

**जैव उर्वरकों का चयन :-**

जैव उर्वरकों के उपयोग से पूरा लाभ उठाने के लिये यह अतिआवश्यक है कि फसल के लिये सही जैव उर्वरकों का चुनाव किया जाय और नत्रजन एवं फास्फोरस दोनो पोषक तत्वों की उपलब्धता सुनिश्चित करने के लिये नत्रजनीय एवं फास्फेटिका जैव उर्वरक समान मात्रा में एक साथ प्रयोग किये जायें।

क) **दलहनी एवं लेग्यूम तिलहन फसलों के लिये :-** दलहनी फसलें जैसे मूँग, उडद, मसूर, मटर, चना, अरहर, ग्वार, मोठ चौला एवं बीन्स तथा लेग्यूम तिलहन जैसे सोयाबीन, मूँगफली तथा चारा फसलें जैसे रिजका, बरसीम इत्यादि के लिये

राइजोबियम एवं फास्फेट घोलक जैव उर्वरक समान मात्रा में केवल बीज उपचार रुप में प्रयोग करें। ध्यान रहे राइजोबियम फसल विशिष्ट होने के कारण अलग-अलग फसलों के लिये अलग-अलग पैकेट होते हैं अतः राइजोबियम, बोई जानी वाली फसल के अनुरुप उसी फसल का होना चाहिये।

ख) **गैर दलहनी फसलों के लिये :-** लेग्यूम फसलों को छोडकर अन्य सभी प्रकार की फसलें जैसे गेहूँ, धान, मक्का, बाजरा, जई, जौ, सरसों, तिल्ली, प्याज, आलू, गन्ना तथा सभी प्रकार की सब्जी वाली फसले एवं बागवानी फसले इस श्रेणी में आती हैं।

- यदि मिट्टी हल्की संरचना की जैसे रेतीली लोम या रेतीली है और नमी कम से मध्यम तक अपेक्षित है तो एजोटोबैक्टर और फास्फेट घोलक जैव उर्वरक प्रयोग करें।
- यदि मिट्टी भारी संरचना की जैसे काली चिकनी मिट्टी या लोम है और नमी अधिक से बहुत अधिक है तो एजोस्पिरिलम और फास्फेट घोलक जैव उर्वरक प्रयोग करें।
- यदि मिट्टी और अन्य अवस्थाएँ मिली जुली हैं तो एजोटोबैक्टर, एजोस्पिरिलम और फास्फेट घोलक जैव उर्वरक १:१:२ के अनुपात में प्रयोग करें।

**प्रयोग विधि :-**

विभिन्न फसलों में जैव उर्वरक का प्रयोग निम्न तीन तरीकों से किया जा सकता है। ध्यान रखें लेग्यूम फसलों में राइजोबियम का प्रयोग केवल बीज उपचार विधि द्वारा ही किया जाना है।

**बीज उपचार विधि :-**

बुवाई किये जाने वाले प्रत्येक १० से १२ किलो बीज के लिये २०० ग्रम (एक पैकेट) नत्रजनीय जैव उर्वरक एवं २०० ग्राम फास्फेट घोलक जैव उर्वरक पर्याप्त है। लगभग ३०० - ४०० मि. ली. पानी में दोनो जैव उर्वरकों को मिलायें और एक मिश्रण तैयार करें। इस मिश्रित घोल को धीरे-धीरे १० किलो बीज के ढेर पर डालें और हाथ से तब तक उलटते पलटते जायें जब तक कि सभी बीजों पर जैव उर्वरक की समान परत न चढ जाये। उपचारित बीजों को छाया में सुखायें और तुंरत बुवाई कर दें। यदि बोई जाने वाली भूमि अम्लीय है तो बीज उपचार के तुरंत बाद प्रत्येक १० किलो बीज पर एक किलो खड़िया पाउडर या बुझा-चूना पाउडर छिड़क कर अच्छी प्रकार बीजों के साथ मिला दें और यदि मिट्टी क्षारीय है तो १० किलो बीज पर एक किलो जिप्सम पाउडर छिड़कें तथा तुरंत बुवाई शुरु कर दें।

**पौध जड़ उपचार विधि :-**

यह विधि रोपाई की जाने वाली फसलों में प्रयुक्त की जाती है। सब्जी वाली फसलों के लिये प्रति एकड एक किलो एजोटोबैक्टर/एजोस्पिरिलम एवं एक किलो फास्फेटिका को ५ से १० लीटर पानी (आवश्यकतानुसार) में मिलाये। एक एकड़ में रोपाई की जाने वाले पौधों की जडों को इस धोल में लगभग २०-३० मिनट तक डुबो कर रखें और तुरंत रोपाई करें। रोपाई किये जाने वाले धान के मामले में प्रति एकड़ २ किलो एजोस्पिरिलम एवं दो किलो फास्फोटिका की आवश्यकता होगी। इसके लिये खेत के एक कोने में २ मी x १.५ x ०.२५ मी. की एक क्यारी बनाये और २ इंच तक पानी भरें। जैव उर्वरक की वाँछित मात्रा इस क्यारी में डालकर पानी में अच्छी प्रकार मिला दें । एक एकड़ में रोपाई किये जाने वाले धान की पौध जडो को इस घोल में ८-१२ धंटे तक (रात भर) डुबोकर रखें और उसके बाद रोपाई करें।

**भूमि उपचार :-**

भूमि उपचार के लिये पौधों की संख्या एवं रोपाई किये जाने वाले कंद की मात्रा के अनुरुप प्रति एकड २-४ किलो एजोटोबैक्टर/एजोस्पिरिलम एवं २-४ किलो फास्फोटिका की आवश्यकता होती है। लगभग ५० से १०० किलो कम्पोस्ट के दो भाग कर अलग २ ढ़ेर बनायें। एक ढ़ेर में कुछ पानी के साथ नत्रजनीय जैव उर्वरक एवं दूसरे ढ़ेर में कुछ पानी के साथ फास्फोटिका जैव उर्वरक भली प्रकार मिलायें। इन दोनों ढ़ेरों को ढक कर रात भर के लिये छोड दें। अगले दिन दोनों ढ़ेरो को अच्छी तरह मिलाकर प्रयोग करें। अम्लीय भूमि में इस ढ़ेर में लगभग २५ किलो बूझा-चूना पाउडर भी मिला दें। बागवानी फसलों में इस जैव उर्वरक कम्पोट मिश्रण को पौधो की जडों के आस पास की मिट्टी में मिला दें । कुछ फसलों में इस मिश्रण को पूरे खेत में समान रुप से छिडककर मिट्टी में मिलाकर भी प्रयोग किया जाता है। गन्ने, आलू, अदरक, हल्दी,

अरबी इत्यादि में नालियों में पहले जैव उर्वरक - कम्पोस्ट मिश्रण डालकर उसके उपर कंद रखें व मिट्टी से ढक दें। गन्ने की फसल में बुवाई पश्चात ३० से ४० दिन बाद मिट्टी चढाते समय भी इस मिश्रण का प्रयोग किया जा सकता है। ऐसा तभी करना चाहिये जब बुवाई किये जाने वाले टुकडों या कंदों को पौध संरक्षण रसायनों से उपचारित किया हो।

**जैव उर्वरक प्रयोग कुंजी**

| क्रमांक | फसल | जैव उर्वरक एवं उनकी मात्रा |
|---|---|---|
| १. | सभी लेग्यूम फसले जैसे - मूँग, उड़द, चौला, मटर, मसूर, चना, अरहर, बीन्स, मूँगफली, सोयाबीन, रिजका, बरसीम इत्यादि. | प्रत्येक १० किलो बीज के लिये २०० ग्राम फसल विशिष्ट राइजोबियम व २०० ग्राम फास्फोटिका बीज उपचार विधि द्वारा प्रयोग करें। |
| २. | गैर दलहनी/गैर लेग्यूम फसलों जैसे गेहूँ, सीधे बीज से बोये जाने वाला धान, मक्का, बाजरा, जौ, ज्वार, सरसों, कपास, सूर्यमुखी, भिण्डी इत्यादि. | प्रत्येक १० किलो बीज के लिये २०० ग्राम एजोटोबैक्टर या एजोस्पिरिलम व २०० ग्राम फास्फोटिका बीज उपचार विधि द्वारा प्रयोग करें। |
| ३. | जूट | प्रत्येक १० किलो बीज के लिये २०० ग्राम एजोस्पिरिलम व २०० ग्राम फास्फोटिका बीज उपचार विधि द्वारा प्रयोग करें। |
| ४. | रोपाई की जाने वाली सब्जी फसलें जैसे टमाटर, बैगन, मिर्च, पत्तागोभी, फूल गोभी इत्यादि. | प्रति एकड़ १ किलो एजोटोबैक्टर व १ किलो फास्फोटिका पानी में मिलाकर पौध जड़ उपचार विधि द्वारा प्रयोग करें। |
| ५. | रोपाई किये जाने वाला धान | प्रति एकड़ २ किलो एजोस्पिरिलम व २ किलो फास्फोटिका पानी में मिलाकर पौध जडों को ८-१२ घंटे तक डुबोकर उपचारित करें। |
| ६. | आलू, अदरक, अरबी, हल्दी, झूम का धान, गन्ना | प्रति एकड ४ किलो एजोटोबैक्टर या एजोस्पिरिलम व ४ किलो फास्फोटिका १००-२०० किलो कम्पोस्ट में मिलाकर भूमि में प्रयोग करें। |
| ७. | बागवानी फसलें जैसे चाय, काफी, रबड़, शहतूत व फल वृक्ष. | प्रति एकड २ से ३ किलो एजोटोबैक्टर या एजोस्पिरिलम व २-३ किलो फास्फोटिका २०० किलो कम्पोस्ट में मिलाकर जड़ों के आस पास की मिट्टी में मिलायें। ऐसा वर्ष में २-३ बार ४ से ६ माह के अंतर पर करें। |
| ८. | गन्ना | प्रति एकड़ ५ किलो एजोटोबैक्टर जैव उर्वरक पर्याप्त पानी में मिलाकर बुवाई किये जाने वाले टुकड़ों को इस घोल में डुबोकर रखें और रोपाई करें। |

# जैविक उर्वरक एवं कम्पोस्ट तकनीक

**कम्पोस्टिंग की आवश्यकता**

**परिचय**

जैविक पदार्थ जैसे फसल अवशेष, पत्ती अवशेष, हरी खरपतवार, कृषि आधारित उद्योगों के उपजात ग्रामींण तथा नगरीय विसर्जन तथा समुद्रीय जीव अवशेष इत्यादि पौधों के पोषण के महत्वपूर्ण साधन हैं। प्राकृतिक प्रक्रिया में मृदा सूक्ष्म जीवों की सहायता से इन जैविक पदार्थों का विघटन होता है जिससे कार्बन, नाईट्रोजन, फास्फोरस एवं सल्फर आदि मृदा को प्राप्त होते हैं। पशु विसर्जन जैसे गाय, भैंस, भेंड़-बकरी, गधा, घोड़ा आदि के मल-मूत्र एवं मुर्गी की विष्ठा आदि को भी सूक्ष्म जीवाणुओं की मदद् से विघटित किया जाता है और जैविक खादों की तरह प्रयोग किया जाता है।

**जैविक विघटन के सिद्धांत एवं तकनीक**

सूक्ष्म जीवों जैसे जीवाणु कवक एक्टीनोमाइसिटिस आदि के द्वारा जैविक पदार्थों का विघटन किया जाता है। जैविक पदार्थ उच्च तापीय एवं मध्य तापीय अवस्थाओं में ढ़ेर गड्ढे टैंक आदि में उपयुक्त नमीं और वायुवीय अवस्थाओं में वृहत रूप से विघटित होते हैं और अंत में भूरे से गहरे भूरे या काले रंग में परिवर्तित हो जाते हैं जिसे कम्पोस्ट कहते हैं।

**विघटन को नियंत्रित करने वाले कारक**

१. **कार्बन-नत्रजन अनुपात -**

जैविक पदार्थों का खाद में रूपान्तरण एक सूक्ष्मजैवीय प्रक्रिया है तथा इस प्रक्रिया की तीव्रता पदार्थ के कार्बन-नत्रजन अनुपात पर निर्भर करती है। उपयुक्त प्रक्रिया हेतु यह अनुपात लगभग ३० के आस-पास होना चाहिए। जिन पदार्थों में यह अनुपात अधिक होता है जैसे गेहूँ, धान, ज्वार, बाजरा, मक्का इत्यादि का भूसा, कपास की टहनियों, जूट या लकड़ी का बुरादा इत्यादि, उनमें यह सूक्ष्मजैवीय प्रक्रिया बहुत धीमे होगी और उन अवशेषों को खाद में बदलने में बहुत ज्यादा समय लगेगा जिन पदार्थों में यह अनुपात लगभग ३० का होगा उनमें नत्रजन प्रचुर मात्रा में होने के कारण यह प्रक्रिया-तीव्र होगी। परंतु यदि यह अनुपात २० से कम हो तो २०-४० प्रतिशत तक नत्रजन विघटित होकर वायुमंडल में चली जायेगी। अतः यह आवश्यक है कि कम्पोस्ट निर्माण शुरू करते समय विभिन्न अवशेषों का इस प्रकार मिश्रण बनाया जाये कि सही कार्बन-नत्रजन अनुपात रहें। धान्य फसलों व खरपतवार भूसा इत्यादि तथा पशु मल का ३:१ अनुपात सर्वाधिक उचित है।

२. **कच्चे जैव पदार्थों की छंटनी एवं कटाई**

जैव पदार्थ जितने छोटे हिस्सों में कटे होंगे विघटन उतनी ही तेजी से होगा। अतः जैविक पदार्थों को विघटन से पूर्व छोटे टुकड़ों में काट-छांट लेना चाहिए।

३. **नमीं**

जैविक पदार्थों के गलन हेतु तथा सूक्ष्म जीवों के गुणन हेतु नमीं की आवश्यकता होती है अतः विघटन के समय ५०-५५ प्रतिशत तक नमी अवश्य रहनी चाहिए।

४. **वायु**

जैविक पदार्थों का विघटन आक्सीजन की उपस्थिति तथा अनुपस्थिति दोनो में होता है शुरूआत् में आक्सीजन आधारित जीवाणुओं द्वारा विघटन होता है अतः शुरूआत् में आक्सीजन उपलब्धता को नियंत्रित किया जा सके इसीलिए टैंक, गड्ढ़े या ढ़ेर की चौड़ाई ५ फीट तथा ऊँचाई ३ फुट से अधिक नहीं होनी चाहिए। १२x५x३ फीट आकार सर्वाधिक उपयुक्त आकार है।

५. **तापमान**

वायुवीय विघटन एक उष्मा उत्सर्जन प्रक्रिया है। जिसमें विघटन शुरू होते ही तापमान बढ़ने लगता है जो धीरे-धीरे बढ़कर ५५ से ६५° से. तक पहुँच जाता है। उच्च तापमान सभी अवॉछित जीवाणुओं को व खरपतवार बीजों को नष्ट

करने में सहायक है। उच्च तापमान विघटन प्रक्रिया के तीव्र होने का द्योतक है तथा इससे अच्छी गुणवत्ता व रोगाणुओं व खरपतवार बीज मुक्त कम्पोस्ट प्राप्त होती है।

६. पी.एच.मान

कम्पोस्ट ढ़ेर में विघटन प्रक्रिया शुरू होते समय अनेक प्रकार के अम्लों का उत्पादन होता है जिससे पूरे ढ़ेर का पी.एच. मान ६ से शुरू होकर ४.५ से ५.० तक पहुँच जाता है परंतु जैसे-जैसे तापमान बढ़ता है पी.एच. मान अम्लीय से क्षारीय होने लगता है। पूर्ण रूप से विघटित कम्पोस्ट का पी.एच मान ७.५ से ८.५ के बीच में होना चाहिए। अम्लीय पी.एच. मान कम्पोस्ट की अपूर्ण विघटनता का द्योतक है।

## जैविक खादों के प्रकार

पशु तथा वनस्पति मूल के जीवाणु विघटित पदार्थों को जैविक खादों की श्रेणी में रखा गया है जिसमें ह्यूमस एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। मृदा उर्वरता बढ़ाने तथा पौधों को पोषक तत्व प्रदान करने के लिए सामान्यतः निम्नलिखित जैविक खाद प्रचलित हैं:-

१. कम्पोस्ट
२. वर्मी कम्पोस्ट
३. गोबर खाद (FYM)
४. हरी खाद
५. खलियाँ
६. बायोगैस स्लरी

## कम्पोस्ट उत्पादन की कुछ प्रमुख विधियाँ

कम्पोस्ट उत्पादन का कार्य ढ़ेर लगाकर, एक गड्ढ़े में या किसी हवादार टैंक में किया जाता है। सभी परिस्थितियों में उपयुक्त हवा तथा नमीं का होना अत्यंत आवश्यक है। गर्मियों में जहाँ गड्ढ़े या टैंक में कम्पोस्ट बनाना सुविधाजनक है वहीं बरसात में सतह पर ढ़ेर बनाकर कम्पोस्ट बनाना अधिक सुगम है।

## कम्पोस्ट बनाने की विधियाँ

१. इंदौर विधि

इस विधि में वनस्पति मूल अवशिष्ट तथा पशु मल-मूत्र आदि को गड्ढों में जमा कर विघटित किया जाता है इसमें गडढ़ों का आकार ६x५x३ फुट सर्वोत्तम पाया गया है। गड्ढ़ों को समान रूप से ३ भागों में विभाजित किया जाता है जिनमें से २ भागों को उपरोक्त पदार्थों से भर दिया जाता है जब कि एक भाग खाली रखा जाता है जिसमें यथासमय पहले २ गड्ढ़ों का पदार्थ पलटकर भरा जाता है। इस विधि में पहले २ गड्ढ़ों को उपयुक्त पदार्थों से भरकर गोबर और मिट्टी से लेपकर पूरी तरह से बंद कर दिया जाता है तथा उपयुक्त समय पर पुनः पलटकर तीसरे खाली गड्ढ़े से भरा जाता है तथा पुनः गोबर व मिट्टी के लेप से बंद कर दिया जाता है इस प्रकार लगभग ३ महीने में कम्पोस्ट तैयार हो जाता है। इस विधि से तैयार कम्पोस्ट में लगभग ०.८ प्रतिशत नाइट्रोजन, ०.३-०.५ प्रतिशत फास्फेट और १-१.५ प्रतिशत पोटाश तत्व उपलब्ध होते हैं।

२. फौलर विधि

इस विधि में पहले से विघटित हो रहे जैविक पदार्थों के ऊपर नए वनस्पति मूल अवशिष्ट को डाला जाता है ताकि पहले से विघटन कर रहे जीवाणु नए पदार्थों को तेजी से विघटित कर सकें।
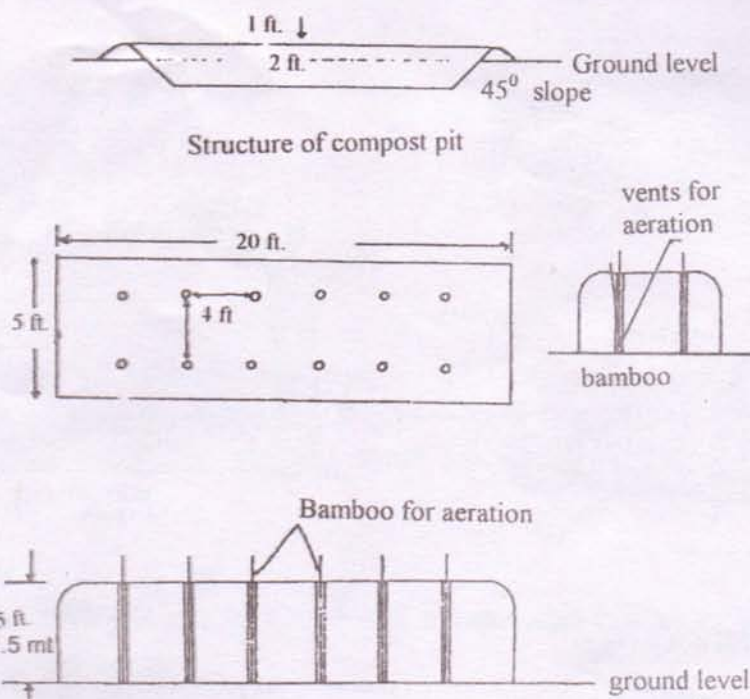
३. नादेप विधि

यह विधि महाराष्ट्र के नारायण देवराव पंढरीपॉडे नामक किसान द्वारा विकसित की गई है अतः इसे नादेप विधि के नाम से जाना जाता है। इस विधि में ईंट व सीमेंट की मदद से १२'x ५'x ३' के टैंक बनाये जाते हैं। इन टैंकों में तल से एक फुट ऊँचाई के बाद दीवार की प्रत्येक ईंट के बाद में करीब आधा ईंट का स्थान छोंड़कर ईंटें इस प्रकार चुनी जाती हैं ताकि निर्मित टैंक में वायु प्रवेश के लिए पर्याप्त स्थान वना रहे। टैंक बनाने के बाद टैंक को अंदर से पतले गोबर से लीप दिया जाता है इसके बाद इसमें ४-६ इंच मोटी जैविक पदार्थों की एक तह बनायी जाती है उसके बाद ४-६ इंच मोटी तह हरे वानस्पतिक पदार्थों से भरकर बनाई जाती है उसके बाद लगभग ४ कि.ग्रा. गोबर १०० लीटर पानी में घोलकर इस तह के ऊपर समान रूप से छिड़क दिया जाता है अंत में करीब ६० कि.ग्रा. मिट्टी भरे हुए पदार्थों के ऊपर समान रूप से विखेर दी जाती है। इसी प्रकार प्रत्येक टैंक में १०-१२ तह बनाई जाती हैं। टैंक अपनी कुल ऊँचाई से लगभग डेढ़ फुट ऊँचाई तक ढ़क दिया जाता है/भरा जाता है ऊपरी सतह को ३ इंच मोटाई की मिट्टी और गोबर घोल परत से लीप दिया जाता है। लगभग १५ दिन से एक महीने के बाद भरे हुए पदार्थ लगभग ०२ फुट नीचे टैंक में धँस जाते हैं। इस प्रकार टैंक में बने स्थान को पुनः इसी प्रकार की तह बनाकर मिट्टी व गोबर के लेप से बंद कर दिया जाता है। आवश्यकता पड़ने पर नमीं बनाये रखने हेतु ६ से १५ दिन के अंतर से पानी का छिड़काव किया जाता है। लगभग ३ महीने में कम्पोस्ट खाद बनकर तैयार हो जाती है।

इस विधि में भारतीय तकनीकी संस्थान दिल्ली द्वारा की गई सिफारिशों के अनुसार भरे गये पदार्थों का अनुपात निम्न प्रकार होना चाहिए:-

२० प्रतिशत वानस्पतिक पदार्थ और चूल्हे की राख ५० प्रतिशत गोबर और ३० प्रतिशत खेत की मिट्टी। ऐसा करने से पर्याप्त नमीं बनाये रखने हेतु बार-बार पानी के छिड़काव की आवश्यकता नहीं रहती तथा अच्छी किस्म की कम्पोस्ट अपेक्षाकृत कम समय में तैयार हो जाती है।
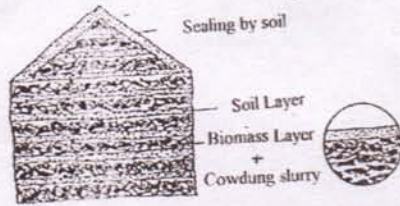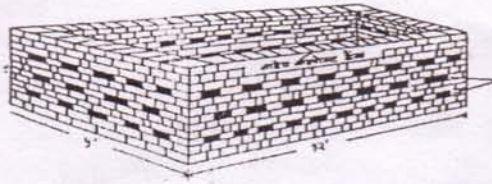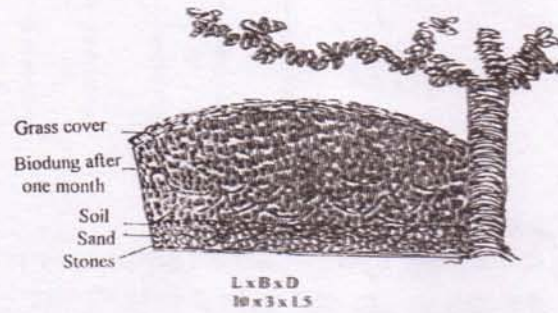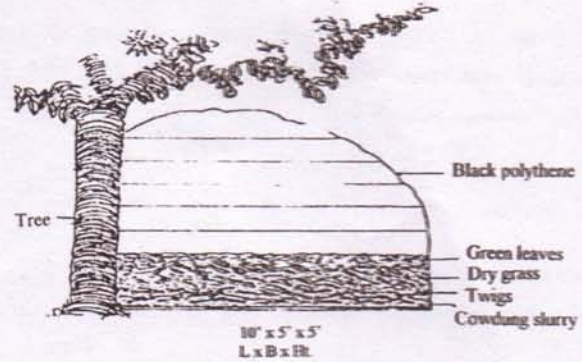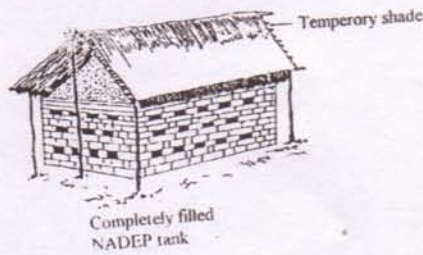
### जैव गोबर तकनीक

यह विधि महाराष्ट्र के वर्धा जिले के ग्रामीण विज्ञान केन्द्र द्वारा विकसित की गई है इसमें मानसून खरपतवार तेजी से उगने वाले पेड़-पौधों की पत्तियाँ जिन्हें सामान्यतः पशु खाना पसंद नहीं करते प्रयोग में लाये जाते हैं। इस विधि में कम्पोस्ट पेड़ की छाया में खुली जगह में तैयार की जाती है इसमें गड्डे व टैंक बनाने की आवश्यकता नहीं रहती। इसके लिए सूखे पेड़-पौधों की पत्तियां तथा अन्य वनस्पतिक पदार्थ पानी और गोबर के घोल में भिगो कर पेड़ की छाया में ढ़ेर कर लिए जाते हैं तथा उसे काली मोमिया चादर से ढ़क दिया जाता है। करीब १५ दिन के अंतर पर इस ढ़ेर की दो बार पलटाई की जाती है और ५०-६० प्रतिशत नमीं पानी छिड़ककर बनाये रखी जाती है। इस प्रकार ५०-६० दिन में कम्पोस्ट खाद बनकर तैयार हो जाती है। इस विधि में अर्द्ध विघटित पदार्थों को वर्मी कम्पोस्टिंग के लिए भी प्रयोग किया जा सकता है।

### वर्मी कम्पोस्ट

वर्मी कम्पोस्टिंग का अर्थ है केंचुओं द्वारा कम्पोस्ट खाद तैयार करना। प्रकृति में केंचुओं की कुछ ऐसी प्रजातियां पाई जाती हैं जो आमतौर पर सभी प्रकार के कार्बनिक पदार्थों को खाकर उन्हें कम्पोस्ट खाद में परिवर्तित कर देती हैं। इस प्रकार बनाई हुई कम्पोस्ट खाद में नाइट्रोजन, फास्फोरस, पोटाश और मैग्नीशियम आदि पोषक तत्वों की मात्रा अपेक्षाकृत अधिक होती है।

### वर्मी कम्पोस्ट तैयार करने हेतु आवश्यकताएं

वर्मी कम्पोस्ट तैयार करते समय मूलतः निम्नलिखित आवश्यकताएं होती हैं:-

अ. केचुओं का चयनः

विश्व भर में केचुओं की पहचान की हुई लगभग ३००० प्रजातियों में से केवल कुछ ही प्रजातियाँ ऐसी हैं जो कम्पोस्ट खाद तैयार करने के काम आती हैं उनमें से प्रमुख हैं

१. आइसेनियाँ फोइटिडा
२. यूड्रीलस यूजेनी
३. पैरियोनिक्स एक्सकेवेट्स

ब. पर्याप्त नमीं

केंचुए बिना नमीं के जीवित नहीं रह सकते। जिन पदार्थों को वर्मी कम्पोस्ट बनाने के लिए चुना गया है वे ही पदार्थ इन केंचुओं तथा सूक्ष्म जीवों के भोजन का भी कार्य करते हैं अतः इन पदार्थों में कम से कम ३५ प्रतिशत या अधिक नमीं की व्यवस्था करनी चाहिए। नमीं की मात्रा अधिकतम् ६० प्रतिशत तक रखी जा सकती है, इससे अधिक नमीं उनके जीवित रहने लिए उचित नहीं होती।

स. उपयुक्त एवं पर्याप्त भोजन

२० से ४० कार्बन नाइट्रोजन अनुपात वाले जैविक पदार्थ केंचुए तथा सूक्ष्म जीवों के भोजन का कार्य करते हैं।

द. उपयुक्त तापमान

सामान्यतः २० डिग्री सेल्सियस से ३५ डिग्री सेल्सियस का तापमान इन जीवों की वृद्धि तथा गुणन के लिए सर्वोत्तम होता है।

य. धूप से सुरक्षा

केंचुए सामान्यतः रात्रिचर प्राणी होते हैं। ये दिन के समय सुसुप्त तथा रात्रि के समय कार्यशील रहते हैं। इनका सीधे धूप के सम्पर्क में आना खतरनाक होता है और कुछ ही घंटों में इनकी मृत्यु हो सकती है अतः धूप से बचाव की पर्याप्त सुविधाएं उपलब्ध करानी चाहिए।

र. केंचुओं के गुणन के लिए उपयुक्त स्थान

कम्पोस्ट बनाने का स्थान जिसमें ये जीव जनन करते हैं छायादार होना चाहिए। केंचुए गड्डों (प्लास्टिक से ढ़के हुए हवादार डिब्बे, बाक्स या बाल्टियाँ) तथा छोटे चबूतरों पर भी उपयुक्त माध्यम (जैविक पदार्थ) में जनन कर सकते हैं।

जैव अवशिष्ट पूर्व उपचार

जैव अवशिष्ट में विघटन प्रक्रिया शुरू होते ही तापमान बढ़ने लगता है जो बढ़कर ५५ से ६५° से. तक हो जाता है। केंचुए उच्च तापमान नहीं सहन कर पाते हैं अतः यह आवश्यक है कि जैव अवशिष्ट में केंचुए छोड़ने से पहले उसका पूर्व उपचार कर उसे अर्धविघटित कर लिया जाये। अर्ध विघटन हेतु अवशिष्ट को छोटे-छोटे टुकड़ों में काटकर गोबर के घोल के साथ मिलाया जाता है और ढ़ेर बनाकर किसी बोरी, त्रिपाल या पॉलिथीन से ढ़क दिया जाता है। १५ दिन के अंतर से ढ़ेर की पलटाई करें तथा जब ढ़ेर का तापमान पुनः २५ से ३०° से. हो जाये तब इसे वर्मीबेड में डालें।

वर्मी बेड का निर्माणः-

नम तथा छायादार स्थान केंचुओं के गुणन हेतु सर्वोत्तम होता है अतः पेड़ अथवा अन्य किसी शेड के नीचे लगभग ३x१x४x५ मींटर आकार के वर्मी बेड बनाने चाहिए। वर्मी बेड जमींन के अन्दर गड्डों के रूप में भी बनाये जा सकते हैं अथवा जमींन के ऊपर प्लेटफार्म के रूप में भी तैयार किये जा सकते हैं।

ईंट के टूटे टुकड़े, छोटे पत्थरों व कंकरों से पहली सतह बनायें। इसके ऊपर ३-६ इंच की मोटी परत केले या अन्य पौधों की सूखी पत्तियाँ, घास इत्यादि को बिछायें। इस परत के ऊपर ६-१२ इंच की परत अर्ध विघटित अवशिष्ट की बिछायें

और केंचुए छोंड़ दें। एक वर्मीबेड हेतु लगभग २००० केंचुओं की आवश्यकता होगी। जल्दी ही केंचुए ऊपरी परत के अंदर चले जायेंगे। अब पूरी बेड सतह को बोरी से ढ़क दें और नमी बनाये रखने हेतु समय-समय पर पानी छिड़कते रहें।

**वर्मीकम्पोस्ट बनाने की अन्य विधियाँ**

**(क) सामान्य विधि (General method)** वर्मीकम्पोस्ट बनाने के लिए इस विधि में क्षेत्र का आकार (area) आवश्यकतानुसार रखा जाता है किन्तु मध्यम वर्ग के किसानों के लिए १०० वर्गमीटर क्षेत्र पर्याप्त रहता है। अच्छी गुणवत्ता की केंचुआ खाद बनाने के लिए सीमेन्ट तथां ईटों से पक्की क्यारियां (Vermi-beds) बनाई जाती हैं। प्रत्येक क्यारी की लम्बाई ३ मीटर, चौड़ाई १ मीटर एवं ऊँचाई ३० से ५० से०मी० रखते हैं। १०० वर्गमीटर क्षेत्र में इस प्रकार की लगभग ६० क्यारियां बनाई जा सकती है। क्यारियों को तेज धूप व वर्षा से बचाने और केंचुओं के तीव्र प्रजनन के लिए अंधेरा रखने हेतु छप्पर के उपर और चारों ओर टट्टियों से या हरे नेट से ढकना अत्यन्त आवश्यक है।

क्यारियों को भरने के लिए पेड़-पौधों की पत्तियाँ, घास, सब्जी व फलों के छिलके, गोबर आदि अपघटनशील कार्बनिक पदार्थो का चुनाव करते हैं। इन पदार्थों को क्यारियों में भरने से पहले ढ़ेर बनाकर १५ से २० दिन तक सड़ने के लिए रखा जाना आवश्यक है। सड़ने के लिए रखे गये कार्बनिक पदार्थो के मिश्रण में पानी छिड़क कर ढ़ेर को छोड़ दिया जाता है। १५ से २० दिन बाद कचरा अधगले रूप (Partially decomposed) में आ जाता है। ऐसा कचरा केंचुओं के लिए बहुत ही अच्छा भोजन माना गया है। अधगले कचरे को क्यारियों में ५० सेंमी० ऊँचाई तक भर दिया जाता है। कचरा भरने के ३-४ दिन बाद प्रत्येक क्यारी में केंचुऐ छोड़ दिए जाते हैं और पानी छिड़क कर प्रत्येक क्यारी को गीली बोरियो से ढक देते है। एक टन कचरे से ०.६ से ०.७ टन केंचुआ खाद प्राप्त हो जाती है।

**(ख) चक्रीय चार हौद विधि (Four-pit method)** इस विधि में चुने गये स्थान पर १२'x१२'x२.५' (लम्बाई x चौड़ाई x ऊँचाई) का गड्ढा बनाया जाता है। इस गड्ढे को ईंट की दीवारों से ४ बराबर भागों में बाँट दिया जाता है। इस प्रकार कुल ४ क्यारियां बन जाती हैं। प्रत्येक क्यारी का आकार लगभग ५.५' x ५.५' x २.५' होता है। बीच की विभाजक दीवार मजबूती के लिए दो ईंटों (६ इंच) की बनाई जाती है। विभाजक दीवारो में समान दूरी पर हवा व केंचुओं के आने जाने के लिए छिद्र छोड़े जाते हैं। इस प्रकार की क्यारियों की संख्या आवश्यकतानुसार अधिक भी रखी जा सकती है।

इस विधि में प्रत्येक क्यारी को एक के बाद एक भरते हैं अर्थात पहले एक महीने तक पहला गड्ढा भरते हैं पूरा गड्ढा भर जाने के बाद पानी छिड़क कर काले पॉलीथिन से ढक देते हैं ताकि कचरे में विघटन की प्रक्रिया आरम्भ हो जाये। इसके बाद दूसरे गड्ढे में कचरा भरना आरम्भ कर देते हैं। दूसरे माह जब दूसरा गड्ढा भर जाता है तब ढक देते हैं और कचरा तीसरे गड्ढे में भरना आरम्भ कर देतें है। इस समय तक पहले गड्ढे का कचरा अधगले रूप में आ जाता है। एक दो दिन बाद जब पहले गड्ढे में गर्मी (heat) कम हो जाती है तब उसमें लगभग ५ किग्रा० (५०००) केंचुए छोड़ देते हैं। इसके बाद गड्ढे को सूखी घास अथवा बोरियों से ढक देते हैं। कचरे में गीलापन बनाये रखने के लिए आवश्यकतानुसार पानी छिड़कते रहते है। इस प्रकार ३ माह बाद जब तीसरा गड्ढा कचरे से भर जाता है तब इसे भी पानी से भिगो कर ढक देते हैं और चौथे गड्ढे में कचरा भरना आरम्भ कर देते हैं। धीरे-धीरे जब दूसरे गड्ढे की गर्मी कम हो जाती है तब उसमें पहले गड्ढे से केंचुए विभाजक दीवार में बने छिद्रों से अपने आप प्रवेश कर जाते हैं और उसमें भी केंचुआखाद बनना आरम्भ हो जाता है। इस प्रकार चार माह में एक के बाद एक चारों गड्ढे भर जाते हैं। इस समय तक पहले गड्ढे में जिसे भरे हुए तीन माह हो चुके है, केंचुआ खाद (वर्मीकम्पोस्ट) बनकर तैयार हो जाता है। इस गड्ढे के सारे केंचुए दूसरे एवं तीसरे गड्ढे में धीरे-धीरे बीच की दीवारों में बने छिद्रों द्वारा प्रवेश कर जाते हैं। अब पहले गड्ढे से खाद निकालने की प्रक्रिया आरम्भ की जा सकती है। खाद निकालने के बाद उसमें पुनः कचरा भरना आरम्भ कर देते हैं। इस विधि में एक वर्ष में प्रत्येक गड्ढे में एक बार में लगभग १० कुन्तल कचरा भरा जाता है जिससे एक बार में ७ कुन्तल खाद (७० प्रतिशत) बनकर तैयार होता है। इस प्रकार एक बर्ष में चार गड्ढों से तीन चक्रों में कुल ८४ कुन्तल खाद (४x३x७) प्राप्त होता है। इसके अलावा एक वर्ष में एक गड्ढे से २५ किग्रा० और ४ गड्ढों से कुल १०० किग्रा० केंचुए भी प्राप्त होते हैं।

(ग) **केंचुआ खाद बनाने की चरणबद्ध विधि**

केंचुआ खाद बनाने हेतु चरणबद्ध निम्न प्रक्रिया अपनाते हैं।

**चरण - १**
कार्बनिक अवशिष्ट / कचरे में से पत्थर, काँच, प्लास्टिक, सिरेमिक तथा धातुओं को अलग करके कार्बनिक कचरे के बड़े ढेलों को तोड़कर ढेर बनाया जाता है।

↓

**चरण - २**
मोटे कार्बनिक अवशिष्टों जैसे पत्तियों का कूड़ा, पौधों के तने, गन्ने की भूसी/खोयी को २ - ४ इन्च आकार के छोटे-छोटे टुकड़ों में काटा जाता है। इससे खाद बनने में कम समय लगता है।

↓

**चरण - ३**
कचरे में से दुर्गन्ध हटाने तथा अवाँछित जीवों को खत्म करने के लिए कचरे को एक फुट मोटी सतह के रुप में फैलाकर धूप में सुखाया जाता है।

↓

**चरण - ४**
अवशिष्ट को गाय के गोबर में मिलाकर एक माह तक सड़ाने हेतु गड्ढे में डाल दिया जाता है। उचित नमी बनाने हेतु रोज पानी का छिड़काव किया जाता है।

↓

**चरण - ५**
केंचुआ खाद बनाने के लिए सर्वप्रथम फर्श पर बालू की १ इन्च मोटी पर्त बिछाकर उसके ऊपर ३-४ इन्च मोटाई में फसल का अवशिष्ट / मोटे पदार्थों की पर्त बिछाते हैं। पुनः इसके ऊपर चरण - ४ से प्राप्त पदार्थों की १८ इन्च मोटी पर्त इस प्रकार बिछाते हैं कि इसकी चौड़ाई ४०-४५ इन्च बन जाती है। बेड की लम्बाई को छप्पर में उपलब्ध जगह के आधार पर रखते हैं। इस प्रकार १० फिट लम्बाई की बेड में लगभग ५०० कि ग्रा कार्बनिक अवशिष्ट समाहित हो जाता है। बेड को अर्धवृत्ताकार का रखते हैं जिससे केंचुए को घूमने के लिए पर्याप्त स्थान तथा बेड में हवा का प्रबंधन संभव हो सके। इस प्रकार बेड बनाने के बाद उचित नमी बनाये रखने के लिए पानी का छिड़काव करते रहते है तत्पश्चात इसे २-३ दिनों के लिए छोड़ देते हैं।

↓

**चरण - ६**
जब बेड के सभी भागों में तापमान सामान्य हो जाये तब इसमें लगभग ५००० केंचुए / ५०० कि०ग्रा० अवशिष्ट की दर से केंचुआ तथा कोकून का मिश्रण बेड की एक तरफ से इस प्रकार डालते हैं कि यह लम्बाई में एक तरफ से पूरे बेड तक पहुँच जाये।

↓

**चरण - ७**
सम्पूर्ण बेड को बारीक / कटे हुए अवशिष्ट की ३-४ इन्च मोटी पर्त से ढकते हैं, अनुकूल परिस्थितियों में केंचुए पूरे बेड पर अपने आप फैल जाते हैं। ज्यादातर केंचुए बेड में २-३ इन्च गहराई पर रहकर कार्बनिक पदार्थों का भक्षण कर उत्सर्जन करते रहते हैं।

↓

**चरण - ८**
अनुकूल आर्द्रता, तापक्रम तथा हवामय परिस्थितियों में २५-३० दिनों के उपरान्त बैड की ऊपरी सतह पर ३-४ इन्च मोटी केंचुआ खाद एकत्र हो जाती हैं। इसे अलग करने के लिए बेड की बाहरी आवरण सतह को एक तरफ से हटाते हैं। ऐसा करने पर जब केंचुए बेड में गहराई में चले जाते हैं तब केंचुआ खाद को बेड से आसानी से अलग कर तत्पश्चात बेड को पुनः पूर्व की भाँति महीन कचरे से ढक कर पर्याप्त आर्द्रता बनाये रखने हेतु पानी का छिड़काव कर देते हैं।

↓

| | |
|---|---|
| चरण - ९ | लगभग ५-७ दिनों में केंचुआ खाद की ४-६ इन्च मोटी एक और पर्त तैयार हो जाती है। इसे भी पूर्व में चरण-८ की भाँति अलग कर लेते हैं तथा बेड में फिर पर्याप्त आर्द्रता बनाये रखने हेतु पानी का छिड़काव किया जाता है। |

↓

| | |
|---|---|
| चरण - १० | तदोपरान्त हर ५-७ दिनों के अन्तराल में, अनुकूल परिस्थतियों में पुनः केंचुआ खाद की ४-६ इन्च मोटी पर्त बनती है जिसे पूर्व में चरण-६ की भाँति अलग कर लिया जाता है। इस प्रकार ४०-४५ दिनों में लगभग ८०-८५ प्रतिशत केंचुआ खाद एकत्र कर ली जाती है। |

↓

| | |
|---|---|
| चरण - ११ | अन्त में कुछ केचुआ खाद, केंचुओं तथा केचुए के अण्डों (कोकून) सहित एक छोटे से ढेर के रुप में बच जाती है। इसे दूसरे चक्र में केचुए के संरोप के रुप में प्रयुक्त कर लेते हैं। इस प्रकार लगातार केंचुआ खाद उत्पादन के लिए इस प्रक्रिया को दोहराते रहते हैं। |

↓

| | |
|---|---|
| चरण - १२ | एकत्र की गयी केंचुआ खाद से केंचुए के अण्डों, अव्यस्क केंचुओं तथा केंचुए द्वारा नहीं खाये गये पदार्थों को ३-४ मैस आकार की छलनी से छान कर अलग कर लेते हैं। |

↓

| | |
|---|---|
| चरण - १३ | अतिरिक्त नमी हटाने के लिए छनी हुई केचुआ खाद को पक्के फर्श पर फैला देते हैं। तथा जब नमी लगभग ३०-४० प्रतिशत तक रह जाती है तो इसे एकत्र कर लेते हैं। |

↓

| | |
|---|---|
| चरण - १४ | केंचुआ खाद को प्लास्टिक/एच० डी० पी० ई० थैलों में सील करके पैक किया जाता है ताकि इसमें नमी कम न हो। |

**वर्मीकम्पोस्ट बनाते समय ध्यान रखने योग्य बातें**

कम समय में अच्छी गुणवत्ता वाली वर्मीकम्पोस्ट बनाने के लिए निम्न बातों पर विशेष ध्यान देना अति आवश्यक है ।

1. वर्मीबेडों में केंचुआ छोड़ने से पूर्व कच्चे माल (गोबर व आवश्यक कचरा) का आंशिक विच्छेदन (Partial decomposition) जिसमें १५ से २० दिन का समय लगता है करना अति आवश्यक है।
2. आंशिक विच्छेदन की पहचान के लिए ढ़ेर में गहराई तक हाथ डालने पर गर्मी महसूस नहीं होनी चाहिए। ऐसी स्थिति में कचरे की नमीं की अवस्था में पलटाई करने से आंशिक विच्छेदन हो जाता है।
3. वर्मीबेडों में भरे गये कचरे में कम्पोस्ट तैयार होने तक ३० से ४० प्रतिशत नमी बनाये रखें। कचरे में नमीं कम या अधिक होने पर केंचुए ठीक तरह से कार्य नही करते।
4. वर्मीबेडों में कचरे का तापमान २० से २७ डिग्री सेल्सियस रहना अत्यन्त आवश्यक है। वर्मीबेडों पर तेज धूप न पड़ने दें। तेज धूप पड़ने से कचरे का तापमान अधिक हो जाता है परिणामस्वरूप केंचुए तली में चले जाते हैं अथवा अक्रियाशील रह कर अन्ततः मर जाते हैं।
5. वर्मीबेड में ताजे गोबर का उपयोग कदापि न करें। ताजे गोबर में गर्मी (Heat) अधिक होने के कारण केंचुए मर जाते हैं अतः उपयोग से पहले ताजे गोबर को ४-५ दिन तक ठण्डा अवश्य होने दें।
6. केंचुआ खाद तैयार करने हेतु कार्बनिक कचरे में गोबर की मात्रा कम से कम २० प्रतिशत अवश्य होनी चाहिए।
7. कांग्रेस घास को फूल आने से पूर्व गाय के गोबर में मिला कर कार्बनिक पदार्थ के रूप में आंशिक विच्छेदन कर प्रयोग करने से अच्छी केंचुआ खाद प्राप्त होती है।
8. कचरे का पी. एच. उदासीन (७.० के आसपास) रहने पर केंचुए तेजी से कार्य करते हैं अतः वर्मीकम्पोस्टिंग के दौरान कचरे का पी. एच. उदासीन बनाये रखे। इसके लिए कचरा भरते समय उसमें राख (ash) अवश्य मिलायें।
9. केंचुआ खाद बनाने के दौरान किसी भी तरह के कीटनाशकों का उपयोग न करें।

10. खाद की पलटाई या तैयार कम्पोस्ट को एकत्र करते समय खुरपी या फावड़े का प्रयोग कदापि न करें। इन यंत्रों के प्रयोग से केंचुओं के कट कर मर जाने की सम्भावना बनी रहती है।
11. कचरे में से काँच के टुकड़े, कील, पत्थर, प्लास्टिक, पोलीथीन आदि को छाँट कर अलग कर दें।
12. केंचुओं को चिड़ियों, दीमक, चींटियों आदि के सीधे प्रकोप से बचाने के लिए क्यारियों के कचरे को बोरियो से अवश्य ढकें।
13. केंचुए को अंधेरा अति पसंद है अतः वर्मी बैड को हमेशा टाट बोरा/सूखी घास-फूस इत्यादि से ढ़क कर रखना चाहिए।
14. केंचुओं के अधिक उत्पादन हेतु बेड़ में नमीं ३० से ३५ प्रतिशत तथा केंचुआ खाद के अधिक उत्पादन के लिए नमीं २० से ३० प्रतिशत के बीच रखनी चाहिए।
15. वर्मीबेड में नमीं की मात्रा ३५ प्रतिशत से अधिक होने से वायु संचार में कमीं हो जाती है जिसके कारण केंचुए बेड की उपरी सतह पर आ जाते हैं।
16. अच्छी वायु संचार के लिए वर्मीबेड में प्रत्येक सप्ताह कम से कम एक बार पंजा चलाना चाहिए जिससे केंचुओं को वर्मी कम्पोस्ट बनाने हेतु उपयुक्त वातावरण मिल सके।
17. केंचुओं के अधिक उत्पादन हेतु बेड पर केंचुआ छोंड़ने के समय ५०० मि.ली. मट्ठा/५०० मि.ली. शीरे को ५ से १० लीटर पानी में घोलकर प्रति बैड पर छिड़काव करने से केंचुओं का प्रजनन तथा कम्पोस्टिंग तेजी के साथ होता है।
18. ***बोकाषी*** का मिश्रण जिसमें गेहूँ की भूसी, चने का छिलका/पाउडर एवं नीम/सरसों की खली के समान मिश्रण की ५०० ग्राम मात्रा ५ से १० लीटर पानी में घोलकर प्रति बैड पर छिड़कने से केंचुओं की प्रजनन बढ़ाई जा सकती है।
19. केंचुओं की अच्छी बढ़वार एवं गुणवत्तायुक्त उत्पादन के लिए वर्मी शैडों में अंधेरा, नमी, वायु संचार, आंशिक रूप से विच्छेदित कचरा, नियमित देखभाल तथा अच्छा प्रबंधन होना अति आवश्यक है।
20. केंचुआ खाद में प्रयुक्त कृषि अवशेषों के तीव्र विच्छेदन (डिकम्पोजीशन) के लिए गाय के गोबर की स्लरी या ट्राईकोडर्मा पाउडर ५० से १०० ग्राम मात्रा प्रति बैड में मिला सकते हैं।
21. यदि पौधों व जानवरों के अवशेष के अतिरिक्त कोई प्रोसेस किए हुए कार्बनिक अवशेष का प्रयोग करना है तो केचुओं को धीरे-धीरे नयी माध्यम सामग्री पर अपने को ढ़ालने एवं स्वीकार करने के लिए गाय के गोबर के साथ भिन्न-भिन्न अनुपातों में मिला कर देना चाहिए।
22. सब्जी आदि के अवशेषों में यदि कीट आदि के प्रकोप होने व उसके अंडे-लारवा होने का अंदेशा है तो नीम आधारित कीटनाशक का १०० मि.ली. घोल ५ से १० किलो व्यर्थ पदार्थ की दर से डिकम्पोजीशन से पूर्व छिड़काव कर सकते हैं।
23. एजोटोबेक्टर तथा पी.एस.बी. पाउडर जो कि विच्छेदन के कार्य में सहायक है ५० से १०० ग्राम मात्रा प्रति बैड में शुरूआत में ही छिड़क कर मिलाने से खाद जल्दी परिपक्व होती है।
24. अच्छे प्रजनन हेतु बैड का तापक्रम २५ से ३२ डिग्री के बीच होना चाहिए।
25. वर्मीकम्पोस्ट बनाने के लिए हमेंशा ऊँचे स्थान का चुनाव करें।
26. केंचुए को लाल चींटियों से बचाने के लिए चारकोल पाउडर का बुरकाव किया जा सकता है।

**क्यारियों से केंचुआ खाद एकत्र करना**

क्यारियों से केंचुआ खाद एकत्र करने से पहले यह अच्छी तरह सुनिश्चित कर लें कि खाद पूरी तरह तैयार हो गयी है। केंचुए अपनी प्रवृत्ति के अनुसार ऊपर से नीचे की ओर कचरे को खाना आरम्भ करते हैं अतः खाद पहले ऊपरी भाग में तैयार होती है। अवशिष्ट पदार्थों के वर्मीकम्पोस्ट में परिवर्तित हो जाने पर खाद दुर्गंध रहित हो जाती है तथा दानेदार व गहरे रंग की दिखाई देने लगती है। छूने पर तैयार खाद चाय के दानों के समान लगती है। वर्मीकम्पोस्ट तैयार होने में लगभग ३ महीने का समय लग जाता है। वर्मीकम्पोस्ट तैयार होने में लगा समय केंचुओं की नस्ल, परिस्थितियों, प्रबन्धन तथा कचरे के प्रकार पर निर्भर करता है। वर्मीकम्पोस्ट जैसे-जैसे तैयार होती जाय उसे धीरे-धीरे एकत्र करते रहना चाहिए। तैयार खाद हटा लेने से उस क्षेत्र में वायुसंचार बढ़ जाता है जिससे केंचुआ खाद निर्माण की प्रक्रिया में तेजी आ जाती है। तैयार केंचुआखाद हटाने में बिलम्ब होने से केंचुए मरने लगते हैं और उस क्षेत्र में चीटियों के आक्रमण की सम्भावना बढ़ जाती है। केंचुआखाद हटाने के लिए ५ से ७ दिन पहले पानी का छिड़काव बन्द कर देना चाहिए ताकि केंचुए खाद में से निकल कर नीचे की ओर चले जायें। खाद को हाथ से या लकड़ी की फट्टी से क्यारी के एक कोने में एकत्र करें और ढेर में इकट्ठा

करने के ४-५ घण्टे बाद खाद को वहाँ से हटा लें। जब ३/४ भाग तक खाद अलग हो जाये तब क्यारी में पुनः अधगला अपशिष्ट (कचरा) डालकर पानी का छिड़काव कर दें। ऐसा करने से खाद बनने की प्रक्रिया पुनः आरम्भ हो जाती है।

**केंचुआ खाद की छनाई व पैकिंग**

क्यारियों से खाद अलग करने के पश्चात ३-४ दिन तक उसे छाया में सुखाया जाता है। इसके बाद ३ मिली मीटर छिद्र की छलनी से खाद को छान लिया जाता है। छनाई करते समय छोटे केंचुए, कोकून तथा अन्य अनुपयोगी सामग्री खाद से अलग हो जाती है। छनाई के बाद खाद को छोटे-छोटे थैलों में भर लिया जाता है। थैलियों में भराई के समय केंचुआ खाद में नमी की मात्रा १५ से २५ प्रतिशत के आसपास होनी चाहिए।

**केंचुआ खाद का भण्डारण**

केंचुआ खाद बनाने के बाद अधिकांश लोग इसके रखरखाव व भण्डारण पर पर्याप्त ध्यान नहीं देते, नतीजन इस खाद के भौतिक व जैविक गुण प्रायः नष्ट हो जाते हैं और यह पौधों के लिए अधिक प्रभावशाली एवं लाभदायक नहीं रहती। केंचुआ खाद के उचित रखरखाव व खुले भण्डारण के दौरान निम्न बातों पर विशेष ध्यान देना चाहिए :

वर्मीकम्पोस्ट में पाये जाने वाले असंख्य सूक्ष्म जीवों, कोकून तथा अण्डों को जीवित (viable) व सक्रिय (active) रखने के लिए इसमें २५ से ३० प्रतिशत के आसपास नमी बनाये रखने हेतु कम्पोस्ट में आवश्यकतानुसार पानी का छिड़काव करते रहें।

1. वर्मीकम्पोस्ट को कभी भी खुले स्थान पर ढेर के रूप में भण्डारित न करें। खुला रखने से इसमें मौजूद सूक्ष्म जीवाणू, कोकून्स एवं अण्डे तेज धूप से नष्ट हो जाते हैं अतः भण्डारण सदैव छायादार व अंधेरे वाले स्थान पर ही करें।
2. यदि कम्पोस्ट का अधिक समय तक भण्डारण करना हो तो नम व छायादार स्थान पर उचित आकार के गड्ढे बनाकर करें। गड्ढों में वर्मीकम्पोस्ट भर कर सूखी घास एवं बोरियों से ढक दें। आवश्यकता होने पर सूखी घास एवं बोरियों पर पानी छिड़क कर नमी बनाये रखें। इस तरह कम्पोस्ट का भण्डारण करने से उसके पोषक तत्व एवं सूक्ष्म जीवों की क्रियाशीलता सुरक्षित बनी रहती है।
3. वर्मीकम्पोस्ट को यदि कमरों में भण्डारित करना हो तो पहले कमरों तथा खिड़कियों की अच्छी तरह सफाई करें और खाद भरने के बाद दरवाजे तथा खिड़कियों को अच्छी तरह बन्द कर दें। यदि कमरे में रखी कम्पोस्ट को बोरियों से ढक दिया जाय और खाद की तह की ऊँचाई सिर्फ दो फुट ही रखी जाय तो कम्पोस्ट अधिक दिनों तक सुरक्षित रहती है।

**बायो गैस संयंत्र की लुगुदी**

बायो गैस संयंत्रों में जानवरों के कच्चे गोबर के अवायुवीय पाचन से प्राप्त बायो गैस लुगुदी खाद का पोषण मूल्य वायुवीय अपघटन के उत्पादों की तुलना में अधिक लाभदायक है। जैविक कचरे के वायुवीय अपघटन के परिणामस्वरूप लगभग ३० से ५० प्रतिशत नाइट्रोजन की हानि होती है जबकि अवायुवीय पाचन में नाइट्रोजन का लगभग पूरा संरक्षण होता है अवायुवीय जैविक पाचन के दौरान लगभग १५ से १८ प्रतिशत नाइट्रोजन अमोनिकल नाइट्रोजन में परिवर्तित हो जाती है अतः यह आवश्यक है कि लुगुदी के भण्डारण में आवश्यक सावधानियां बरती जायें और इसके प्रयोग के समय में भी आवश्यक सावधानियां बरती जायें ताकि अमोनिकल नाइट्रोजन के ह्रास को कम किया जा सके। बायो गैस खाद पोषण के अतिरिक्त खेतों में मृदा उर्वरता सुधार और उच्च ऊपज प्राप्त करने के लिए भी प्रयोग की जाती है। जैव पाचित लुगुदी का आजकल बहुउद्देशीय प्रयोग जैसे मृदा सुधारक, जलीय जीवों के उत्पादन, जैविक हाइड्रोपोनिक, मशरूम उत्पादन और केचुओं के खाद्य के रूप में भी प्रयोग की जाती है।

पशु गोबर में निहित कार्बन, हाइड्रोजन, आक्सीजन और सल्फर के अतिरिक्त अन्य सभी रसायनिक तत्व जैव पाचित लुगुदी में संरक्षित हो जाते हैं इस कारण बायोगैस खाद FYM की तुलना में अधिक पोषण धनी मानी जाती है। यह भी रिपोर्ट किया गया है कि जैविक खादों का लगातार प्रयोग करने से जिंक और अन्य सूक्ष्म तत्वों की कमीं को रोंका जा सकता है। जहाँ उच्च ऊपज वाली जातियाँ बोई जाती हैं सूखी बायोगैस खाद डालने से सुधरी हुई मृदा स्थितियां खरपतवारों को रोकती हैं, मृदा नमीं को रोंके रखने में सहायता करती है, मृदा सूक्ष्म जीवों को बढ़ाती है और भू क्षरण को रोकती है।

# जैविक खेती में जैव सक्रिय (Biodynamic preparations) उत्पादों का योगदान :

प्राचीन समय से ही यह धारणा है कि हमारे जीवन के हर पहलू, पर्यावरण व मौसम पर सूर्य, चाँद, सितारों व नक्षत्रों की गति का महत्वपूर्ण प्रभाव होता है। इसी आधार पर यह भी माना जाता है कि कृषि एवं फसल उत्पादन पर भी इन नक्षत्रों का महत्वपूर्ण प्रभाव होता है। इन नक्षत्रीय शक्तियों की प्रभाविता को ध्यान में रखकर विभिन्न संस्थाओं द्वारा कुछ जैव सक्रिय उत्पाद (Biodynamic preparations) विकसित किये गये हैं। ये जैव सक्रिय उत्पाद मिट्टी की उर्वरा शक्ति को बढ़ाने के साथ नाशीजीव प्रबंधन में भी योगदान करते हैं।

जैव सक्रिय पदार्थों के लगातार प्रयोग से मिट्टी की खोई हुई उर्वरा क्षमता पुर्नस्थापित होती है तथा मिट्टी के स्वास्थ्य में उत्तरोत्तर सुधार होता है। कुछ जैव सक्रिय उत्पाद रोगनिरोधी पदार्थों के रूप में कार्य करते हैं और कृषि नाशीजीव के प्रबंधन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है। जैव सक्रिय पदार्थों के प्रायोजकों के अनुसार "जैव सक्रिय पदार्थों के प्रयोग से मिट्टी और उसके आसपास के वातावरण में ऐसी प्राकृतिक प्रक्रियाओं की शुरूआत होती है जिससे मिट्टी और उसमें उगने वाले पौधों में नक्षत्रीय शक्तियों को ग्रहण करने और उन शक्तियों को लाभ वाली प्रक्रियाओं में बदलने की क्षमता उत्पन्न होती है।" जैव सक्रिय उत्पाद पौधों का भोजन नहीं हैं वरन् ये पौधों में नक्षत्रीय शक्तियों को ग्रहण करने की क्षमता बढ़ाते हैं। कम्पोस्ट में प्रयुक्त होने वाले जैव सक्रिय उत्पाद कम्पोस्ट उत्प्रेरक या वृद्धिकारक होकर कुछ विशिष्ट जीवाणुओं द्वारा नक्षत्रीय शक्तियों को ग्रहण करने की क्षमता उत्पन्न करते हैं जिससे विभिन्न पोषण तत्व चक्रों का निर्बाध संचालन होता है। संक्षेप में जैव सक्रिय उत्पाद ऐसे जैविक उत्पाद हैं जिनसे नक्षत्रीय शक्तियों को मिट्टी में विभिन्न जैविक प्रक्रियाओं एवं तत्व चक्रों को मजबूत एवं प्रभावी करने के काम में लिया जाता है।

अभी तक कुल मिलाकर नौ प्रकार के जैव सक्रिय उत्पाद विकसित किये गये हैं और उन्हें नुस्खा क्र.५०० से ५०८ तक नाम दिये गये है। इन उत्पादों में नुस्खा क्र.५०० (बी.डी.-५००) तथा नुस्खा क्र.५०१ (बी.डी.-५०१) सर्वाधिक लोकप्रिय है। नुस्खा क्र.५०२ से ५०७ (बी.डी.५०२ से बी.डी.५०७) कम्पोस्ट उत्पादन में प्रयुक्त किये जाते है। नुस्खा क्र.५०८ (बी.डी.-५०८) रोगनिरोधी है और अनेक प्रकार के फफूँद जन्य रोगों की रोकथाम में सहायक है।

बी.डी.-५०० (सींग खाद)

भारतीय परम्पराओं एवं मान्यताओं के अनुरूप तथा जैव सक्रिय पदार्थों के प्रणेता रूडोल्फ स्टेनर के अनुसार, एक ओर जहाँ गाय का गोबर अनेक नक्षत्रीय शक्तियों से पूर्ण है वहीं गाय के सींग खोल में नक्षत्रीय शक्तियों को ग्रहण करने की अभूतपूर्व क्षमता है। इस प्रक्रिया में इन दोनों पदार्थों की अभूतपूर्व क्षमता का प्रयोग किया गया है।

**उत्पादन विधि**

१. **सींग खोल का चयन** :- गाय का सींग किसी मृत गाय के कंकाल से काट कर निकाला जा सकता है। काटने के पश्चात् इसके अन्दर के पदार्थ को खुरच-खुरच कर निकाल दें और धोकर धूप में सुखा लें। ध्यान रहे सूखने के बाद इसमें कोई दुर्गंध नहीं होनी चाहिये। सींग ऐसी गाय का हो जो कि कम से कम २-३ बार बच्चे जन चुकी हो। सींग खोल में कोई दरार या छेद नहीं होना चाहिये। यदि सींग पर कोई पेन्ट या रंग लगा हो तो उसे केरोसिन से छुडाकर साफ कर लें।

२. **गाय के गोबर का चयन** :- गाय का गोबर ताजा और ऐसी दुधारू गाय का होना चाहिये जिसे हरे पौष्टिक चारे पर पाला जा रहा हो। ध्यान रहे गाय को १५ दिन पूर्व से कोई औषधि या हॉरमोन इत्यादि न दिया गया हो।

३. **गड्ढे की तैयारी** :- किसी खुले स्थान पर उपजाऊ भूमि में लगभग ४० से.मी. गहरा एक गड्ढा खोदें। गड्ढे की लम्बाई व चौडाई आवश्यकतानुसार रखी जा सकती है। गड्ढे में ५ से.मी. मोटी उपरी उपजाऊ सतह की मिट्टी की परत बिछायें और पानी डालकर नम करें।

४. **सींग खोल की भराई** :- एक चौडे मिट्टी के बर्तन में ताजा गोबर को फेंट कर चिकनी लेई (paste) बनायें। इस लेई को धीरे-धीरे सींग खोल में भरें। ध्यान रहे भरते हुए सींग खोल में हवा बिलकुल न रहे। पूरी तरह उपर तक भरे सींग खोलों को गड्ढों में सीधा इस प्रकार खडा करें कि सींग का खुला भाग गड्ढे के पैंदे पर हो और बंद नुकीला भाग आसमान की ओर। बारी बारी से सभी सींग खोल थोडी-थोडी दूरी पर जमा दें। अब गड्ढे को मिट्टी एवं पूरी तरह पकी गाय की गोबर खाद के मिश्रण (२५:१) से भर कर बंद कर दें और चारों कोनों पर पहचान के लिये चार डंडे खडे कर दें। समय समय पर पानी का छिडकाव कर मिट्टी को नम बनाये रखें।

५. **सींगों को गाड़ने एवं निकालने का समय** :- भारतीय पंचाँग एवं चन्द्र कैलेन्डर के हिसाब से इन सींगों को क्वार नवरात्र (अक्तूबर-नवम्बर) के समय गाडा जाना चाहिये और चैत्र नवरात्र (मार्च-अप्रेल) में निकाला जाना चाहिये।

६. **सींग खाद का भंडारण** :- उपयुक्त समय पर खोदकर सींगों को निकाल लें और ठकठाकर खाद को बाहर निकालें। निकालते समय खाद नम होनी चाहिये और उसमें कोई दुर्गंध नहीं होनी चाहिये। इस सींग खाद को मिट्टी के बर्तन में ढ़क कर किसी ठंडे स्थान रख सकते हैं। ध्यान रहे पूरे भंडारण के समय खाद नम बनी रहे और ढक्कन से हवा आती जाती रहे। यदि तापमान अधिक हो तो इस मिट्टी के बर्तन को दो तिहाई मिट्टी में दबा दे और आस पास की मिट्टी को पानी छिड़क कर ठंडा रखें।

७. **प्रयोग** : सींगखाद का प्रयोग सभी प्रकार की फसलों में दो बार किया जाता है, पहली बार बुवाई के एक दिन पहले और दूसरी बार जब फसल २० दिन की हो जाय। अच्छे परिणाम प्राप्त करने के लिये यह जरूरी है कि इसका प्रयोग पूर्ण चन्द्र दिवसों (पूर्णमासी के आस पास) में किया जाय। अमावस्या या उसके आस पास के दिनों में प्रयोग से इस खाद का प्रभाव पूरा नहीं होगा।

८. **प्रयोग विधि** : ३० ग्राम सींगखाद को १३ लीटर पानी में मिलायें। ध्यान रहे पानी ट्यूबवेल या वर्षा का हो नल का नहीं। इस घोल को हाथ से एक घंटे तक हिलायें। पहले हाथ को एक दिशा मे तेजी से तब तक घुमायें जब तक कि पानी में गहरा भंवर न बन जाय, अब तुरंत हाथ की दिशा उल्टी कर घुमायें। इस प्रकार बारी-२ से घड़ी की दिशा व विपरीत दिशा में घुमाते रहें। इस घोल को स्प्रेयर की मदद से खेत मे मिट्टी पर स्प्रे करें। यदि स्प्रेयर उपलब्ध न हो तो एक झाडू की मदद से मिट्टी पर छिडक दें। इस मिश्रण को बनाने के एक घंटे के अंदर प्रयोग करें। इस मिश्रण का प्रयोग सूर्यास्त के समय करना चाहिये। सींग खाद के प्रयोग से मिट्टी में मित्र सूक्ष्मजीवों की बढोत्तरी होती है, केचुँओं कीं संख्या बढ़ती है तथा जडों का अच्छा विकास होता है। नक्षत्रीय शक्तियों के कारण पौध बढ़वार अच्छी होती है और भूमि की जैविकीय प्रक्रियाओं मे सुधार होता है।

**बी.डी ५०१ (सींग सिलिका खाद) :**

इस नुस्खे में क्वार्टज सिलिका का महीन चूर्ण गाय के सींग खोल मे भरकर गर्मी के मौसम मे लगभग ६ माह तक गाड़कर रखा जाता है इसका प्रयोग फसल पर स्प्रे रूप में किया जाता है तथा इसके प्रयोग से पौधों की प्रकाश संश्लेषण प्रक्रिया में वृद्धि होती है, फलों और दानों की गुणवत्ता में सुधार होता है और कुछ रोग (जैसे मिल्डयू व ब्लाइट) एवं कीटों की भी रोकथाम होती है।

**उत्पादन विधि**

१. **सिलिका चूर्ण बनाना** : क्वार्टज सिलिका एक प्रकार का प्राकृतिक खनिज है जो कि चमकदार पत्थरों के रूप में मिलता हैं । सिलिका पत्थरों को तोड़कर छोटे -छोटे टुकड़े करें, अन्य पत्थर मिट्टी इत्यादि अलग कर निकाल दें। साफ टुकडों को पल्वराइजर से महीन चूर्ण बना लें। यदि पल्वराइजर उपलब्ध न हो तो कूटकर महीन चूर्ण बनायें और पतले कपडे से छान लें। सिलिका पाउडर बिल्कुल टैल्कम पाऊडर जितना महीन (२५०-३०० मेश ) होना चाहिये।

२. **सींग खोलों को भरना** : सिलिका पाऊडर को ताजा ट्यूबवैल या वर्षा जल के साथ मिलाकर गूंध लें और एक गाढी लुग्दी बना लें। इस लुग्दी को धीरे-२ सींगों में भरें। ध्यान रहे सींग मे कोई भी खाली जगह या हवा नहीं रहनी चाहिये। सींगों को लगभग दो घंटे के लिये सीधा खड़ा कर छोड़ दें और बीच-२ मे थोडा-२ ठकठकाते रहें। लगभग दो घंटे में फालतू पानी उपर आ जायेगा उसे निथार कर अलग कर दें और खाली जगह को सिलिका लुग्दी से भर दें। फिर जैसा कि बी.डी. - ५०० मे बताया है के अनुसार गड्ढे में गाड दें और मिट्टी से ढ़क दें।

३. **गाडने और निकालने का समय** : बी.डी. -५०० के विपरीत सिलिका सींगों को चैत्र नवरात्र के समय गाड़ा जाता है और क्वार नवरात्र के समय निकाला जाता है।

४. **सिलिका खाद निकालना व भंडारण** : उपयुक्त समय पर सींगों को खोदकर निकालें और सिलिका को इकठ्ठा करें। किसी साफ पक्के फर्श या पोलीथीन पर फैलाकर धूप मे सुखा लें। इस सूखे चूर्ण को काँच की बोतलों में या चीनी मिट्टी के बर्तनों मे भरकर रखा जा सकता है। इन बोतलों या बर्तनों को खुले हवादार तथा रोशनी से भरपूर स्थान पर रखना चाहिये। सींग सिलिका को कभी भी छायादार, ठंडे या अंधेरे स्थान पर नहीं रखना चाहिये।

५. **प्रयोग विधि** : एक एकड़ के लिये केवल १ ग्राम बी.डी ५०१ पर्याप्त है। एक ग्राम सींग सिलिका को १३ लिटर पानी में मिलायें और जैसा कि बी.डी-५०० नुस्खें मे बताया है के अनुसार एक घंटे तक बारी-२ से घड़ी की दिशा व विपरीत दिशा मे तेजी से घुमाते रहें । इस घोल को अच्छे स्प्रेयर की मदद से खेत के उपर हवा में छिडकें। स्प्रे करते समय सबसे महीन वाला नोजल लगायें और नोजल को सिर के उपर पकड़कर आकाश की दिशा मे रखते हुऐ स्प्रे करें। इस प्रकार सिलिका के महीन कण समान रूप से चारों ओर फसल की पत्तियों पर फैल जायेंगे। सींग सिलिका का प्रयोग सुबह सूर्योदय के बाद करना चाहिये। इसे सभी प्रकार की फसलों में तीन बार प्रयोग किया जाता है पहली बार जब फसल मे ३-४ पत्तियाँ हो व बाद मे ३० दिन के अंतर पर दो बार और।

**अन्य जैव सक्रिय उत्पाद**

उपरोक्त दो नुस्खों के अलावा क्र. ५०२ से ५०८ तक के और जैव सक्रिय उत्पाद विकसित किये गये है। परंतु उनको बनाने की विधियाँ बहुत विचित्र हैं और भारतीय पंरम्पराओं एवं मान्यताओं के अनुरूप नहीं हैं। इस कारण ये नुस्खे भारत में लोकप्रिय नहीं हैं। इन नुस्खों का संक्षिप्त विवरण दिया जा रहा है। ये नुस्खे बाजार में भी उपलब्ध हैं तथा कुछ संस्थाओं द्वारा भारत में ही बनाये जा रहे है।

**बी. डी. ५०२** - नमीयुक्त यारौ (Achillea millefolium) के फूलों को बसंत ऋतु में हिरन के ब्लैडर में रखते हैं, तत्पश्चात् इस ब्लैडर को सूर्य की रोशनी में लटकाया जाता है तथा इसको पूरी शरद ऋतु में अच्छी नमीयुक्त मिट्टी में दबाकर रखते हैं और बसन्त ऋतु में मिट्टी से निकालते हैं तथा कम्पोस्ट में मिलाकर खेत में डालते हैं। यह मिश्रण कम्पोस्ट को पोटाश व सल्फर के संचालन में मदद करता है।

**बी. डी. ५०३** - चैमोमिली (Matricria chamomilla) के फूलों को ग्रीष्म ऋतु में इक्कट्ठा करके थोड़ा पानी डालकर एवं चामोमिली चाय को मिलाकर ताजा कटी हुई गाय की ऑंत में डालकर इसके छोटे-छोटे टुकड़े किये जाते हैं तथा इन टुकड़ों को अच्छी ह्यूमस वाली मिट्टी में वर्षा के मौसम में दबाया जाता है। दबाने के स्थान का चयन बर्फ पिघलने पर पानी के बहाव के नजदीक होना चाहिए। इस तरह से प्राप्त मिश्रण कम्पोस्ट में कैल्शियम निर्धारण में मदद करता है।

बी. डी. ५०४ - स्टींगगिंग नेटल (Urtica dioica) को पीट मौस घास में लपेटकर एक वर्ष तक मिट्टी में दबाया जाता है तत्पश्चात् इसको कम्पोस्ट में मिलाया जाता है। यह कम्पोस्ट के ह्युमिफिकेशन मे मदद करता है।

**बी. डी. ५०५** - ओक वृक्ष की छाल को मृत बकरी या भेंड़ के सिर वाले हिस्से में भरकर वर्षा के मौसम में किसी ऐसी जगह दबाया जाता है जहाँ पानी का धीरे-धीरे रिसाव होता हो। इस मिश्रण को बसन्त ऋतु में मिट्टी से निकालकर कम्पोस्ट में मिलाया जाता है जिससे कम्पोस्ट में कैल्शियम वृद्धि के साथ-साथ पौधों की रोग रोधक क्षमता भी बढ़ती है।

**बी. डी. ५०६** - डैन्डेलियन वृक्ष के सूखे फूलों को बसंत ऋतु में इक्कट्ठा कर तथा थोड़ा गीला करके मरी हुई गाय की ऑंत के आस-पास वाली झिल्ली में डालकर एक वर्ष तक मिट्टी में दबाया जाता है यह मिश्रण कम्पोस्ट को सिलिका एवं पोटाश के बीच होने वाली प्रक्रिया को तेज कर पोटैशियम आयन को मिट्टी में छोंड़ने में मदद करता है।

**बी. डी. ५०७** - वैलेरियन (Valeriana officinalis) के फूलों के रस को वर्षा जल में मिलाकर कम्पोस्ट पिट पर छिड़काव से कम्पोस्ट की फास्फोरस घुलनशीलता में वृद्धि होती है।

प्रायः यह देखा गया है कि बी.डी. मिश्रण को बनाना काफी जटिल है लेकिन एक बार बनाने के पश्चात् इन मिश्रणों को कांच की बोतलों में अधिक समय तक रखा जा सकता है। एक चम्मच बी.डी. कम्पोस्ट मिश्रण (५०२-५०७) तीन घन मीटर कम्पोस्ट पिट के लिए पर्याप्त है। एक चाय का चम्मच बी.डी मिश्रण (५०२-५०६) कम्पोस्ट पिट में ३०-४० से.मी. गहरा छेद कर डाला जा सकता है। बी.डी. मिश्रण ५०७ को पानी में मिलाकर कम्पोस्ट पिट पर छिड़काव करना चाहिए।
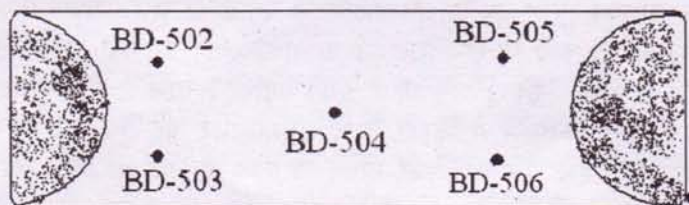
**बी. डी. ५०८** - ताजा कटे हुए होर्सटेल पौधे (Equisetum auriense) को पानी में डालकर २० मिनट तक उबाला जाता है तथा इसको छानकर कॉच की बोतलों में भरकर अधिक समय के लिए रखा जा सकता है। यह घोल फफूंदी नाशक का काम करता है।

**काउ पैट पिट** (C.P.P.) - ईंटों का ६०x६०x३० से.मी. का गढ़्ढ़ा बनाया जाता है जिसको नीचे से पक्का नहीं किया जाता, इसमें ६० कि.ग्रा. ताजा गाय का गोबर, २०० ग्राम अण्डे के छिलके एवं ३०० ग्राम ग्रेनाईट डस्ट को अच्छी तरह मिलाकर १२ से.मी. तक भरा जाता है। गढ़्ढ़ा भरकर समतल किया जाता है तथा इसमें पांच छेद किये जाते हैं जिनमें बी.डी. मिश्रण ५०२ से ५०६, ३ ग्राम प्रति सूत्र की दर से प्रत्येक छेद में डाला जाता है। बी.डी. मिश्रण ५०७ को पानी में मिलाकर पिट पर छिड़काव किया जाता है तथा टाट की बोरियों से इसको ढ़क दिया जाता है। चार सप्ताह पश्चात् वायु प्रवाह हेतु इसको उलटा पलटा जाता है तथा दोबारा से ढ़क दिया जाता है। इसी प्रकार एक सप्ताह बाद फिर हल्की खुदाई करें, C.P.P. लगभग १२ सप्ताह में बनकर तैयार हो जाता है।

C.P.P. को कई तरह से प्रयोग किया जा सकता है। १०० ग्राम C.P.P. प्रति एकड़ के हिसाब से बी. डी. ५०० या ५०१ में मिलाकर स्प्रे किया जा सकता है। C.P.P. को २ कि.ग्रा./एकड़ की दर से कम्पोस्ट में मिलाकर भी प्रयोग किया जा सकता है। C.P.P. को ५ कि.ग्रा./एकड़ की दर से फसल पर हर १५ दिन में छिड़काव किया जा सकता है। C.P.P. को फल वृक्षों के तनों पर पेस्ट के रूप में भी प्रयोग किया जा सकता है। C.P.P. को बायो डाईनेमिक कम्पोस्ट में बी.डी. ५०२-५०७ की जगह भी प्रयोग किया जा सकता है।

# जैविक खेती में ई.एम. तकनीक

ई. एम. तकनीक में अनेक प्रकार के मित्र सूक्ष्मजीवों का मिश्रण विभिन्न क्रिया कलापों जैसे कृषि में फसल बढ़वार हेतु, कम्पोस्ट बनाने हेतु, जल उपचार इत्यादि हेतु प्रयोग किया जाता है। यह तकनीक सर्वप्रथम जापान में क्यूसेई नैचुरल फार्मिंग इंस्टीट्यूट द्वारा वर्ष १९८० मे विकसित की गई थी। इस तकनीक को विकसित करने का मुख्य ध्येय था विभिन्न सूक्ष्मजीवों को मिलाकर एक ऐसे जैविक उत्पाद का निर्माण जिससे मिट्टी की उर्वरता को बढ़ाया जा सके, मृदा जन्य बीमारियों की रोकथाम की जा सके, भूमि में विद्यमान जैव अवशिष्ट को जल्दी सडाया जा सके और फसलों की रासायनिक खादों पर निर्भरता कम की जा सके। इन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिये नवम्बर १९८९ में थाइलैंड देश में इ. एम. तकनीक पर एक अंर्तराष्ट्रीय गोष्ठी आयोजित की गई, जिसके अंतर्गत "एशिया पैसिफिक नैचुरल एग्रीकल्चर नेटवर्क" की स्थापना की गई। यह नेटवर्क अब इस इ. एम. तकनीक आंदोलन को आगे बढ़ा रहा है।

**ई. एम. क्या है?**

ई. एम. का मतलब है इफेक्टिव माइक्रोओरगेनिज्मस् या प्रभावी सूक्ष्मजीव। ई. एम. प्रकृति में उपलब्ध अनेक प्रकार के प्रभावी मित्र सूक्ष्मजीवों का मिश्रण है। इन सूक्ष्म जीवों में प्रमुख हैः नत्रजन स्थिरीकारक, फास्फेट घोलक, प्रकाश संश्लेषीय जीवाणु, लेक्टिक एसिड जीवाणु, यीस्ट, पौध बढ़वार उत्प्रेरक जीवाणु तथा अन्य कई प्रकार के फफूंद व एक्टिनोमाइसिटीज। इस मिश्रण में हर जीवाणु का अपना एक विशिष्ट स्थान है। जो विभिन्न तत्व चक्रों को सुचारू रूप से चलाने, मृदा उर्वरता में सुधार, मृदा स्वास्थ्य में सुधार तथा पौध संरक्षण में सहायता करते हैं।

**ई. एम. जैव उर्वरकों से अलग कैसे है?**

हालाँकि ई. एम. मे जैव उर्वरकों मे प्रयोग किये जाने वाले सभी जीवाणुओं का प्रयोग किया जाता है। परंतु जहाँ प्रत्येक जैव उर्वरक मे केवल एक या एक ही प्रकार के जीवाणुओं का प्रयोग किया जाता है वहीं ई. एम. में एक ही उत्पाद मे अनेक प्रकार के विभिन्न क्रिया कलाप करने वाले जीवाणु होते है। जैव उर्वरकों के प्रत्येक १ ग्राम में एक ही प्रकार के जीवाणु लगभग १-१० करोड़ जीवाणु प्रतिग्राम की मात्रा में होते है। जबकि इ. एम में अनेक प्रकार के जीवाणु कुल मिलाकर १ करोड़ प्रतिग्राम की मात्रा में होते हैं।

**ई. एम. के प्रयोग से लाभ**

- ई.एम. से उपचार करने पर अंकुरण में सुधार होता है, पौधे जल्दी निकलते हैं तथा पौधों में फूल व फल जल्दी आते हैं और फल व दाने जल्दी पकते हैं।
- प्रकाश संश्लेषण प्रक्रिया में वृद्धि होती है।
- कीट प्रकोप सहने की क्षमता बढ़ जाती है।
- मिट्टी के भौतिक, रासायनिक व जैविक गुणों में सुधार होता है।
- एक दूसरे पर आधारित जीवन प्रक्रिया के कारण मिट्टी में सूक्ष्म जीवों एवं सूक्ष्म जन्तुओं की अच्छी बढ़वार होती है। ई. एम. के प्रयोग से वैम फफूँद का जड़ों पर फैलाव बढता है। जिससे पौधों की जल व पोषण प्राप्त करने की क्षमता बढ़ जाती है।
- जैव अवशिष्ट के तीव्र सड़न में सहायक हैं। फसल अवशिष्ट को ई. एम. से उपचारित कर सीधे प्रयोग करने से कम्पोस्ट प्रयोग करने जितना फायदा होता है तथा कम्पोस्ट बनाने की आवश्यकता नहीं रहती है।
- ई. एम. के प्रयोग से मिट्टी में केंचुओं व अन्य मित्र जीवों की संख्या बढ़ती है और मिट्टी स्वस्थ व भुरभुरी बनती है।

**क्या ई. एमः का प्रयोग बार-बार करना जरूरी है?**

यदि एक ही खेत मे ई. एम. का प्रयोग लगातार कुछ वर्षो तक किया जाय तो ये सभी जीवाणु मिट्टी में अच्छी प्रकार स्थापित हो जाते हैं और धीरे-धीरे वे उस मृदा वातावरण के अभिन्न अंग बन जाते हैं। और अपने आप बढने लगते है। ऐसी अवस्था मे ई. एम. के बार-बार उपयोग की आवश्यकता नहीं रहेगी।

**ई. एम. प्रयोग विधि**

कृषि मे ई. एम. प्रयोग में चार प्रमुख बिन्दु है।

- ई. एम. प्राप्ति - बाजार में उपलब्ध है।
- ई. एम का द्वितीयक घोल तैयार करना
- ई.एम. द्वितीयक घोल को पानी में मिलाकर स्प्रे घोल बनाना तथा
- मिट्टी व पौधों पर ई. एम. घोल का स्प्रे

**ई.एम. द्वितीयक घोल तैयार करना**

आवश्यकतानुसार तथा कहाँ किस प्रकार उपयोग करना है के अनुरूप ई. एम. बनाने के अलग-२ नुस्खे हैं कभी-कभी तो एक ही नुस्खा भी अलग अलग २ स्थानों पर फसल एवं पर्यावरण के अनुरूप अलग अलग-२ तरह बनाया जाता है। कुछ लोकप्रिय नुस्खों का विवरण यहाँ दिया जा रहा है। ध्यान रहे ई. एम. के सभी नुस्खों में प्रयुक्त पानी या तो वर्षाजल होना चाहिये या ताजा ट्यूबवेल जल। नल के पानी का प्रयोग वर्जित है।

१. **ई. एम. नुस्खा क्र.१** : यह नुस्खा बीज उपचार, मिट्टी उपचार या फसलों पर सीधे स्प्रे रूप मे प्रयोग हेतु बनाया जाता है।

- लगभग १०० लीटर पानी में ५ किलो गुड घोलें।
- इसमे ५ लीटर ई. एम. द्रव मिलायें।
- अच्छी प्रकार मिलाकर किसी प्लास्टिक की कैन या ड्रम में भरकर सील कर रख दें।
- ७ दिन पश्चात् इस घोल को १:१००० के अनुपात में पानी मे मिलाकर मिट्टी या फसल पर स्प्रे करें। बीज उपचार हेतु बीजों को इस घोल में कुछ समय तक डुबोकर रखें।

२. **ई. एम. नुस्खा क्र. ५** यह नुस्खा नाशीजीवों के नियंत्रण के लिये बनाया जाता है।

- ६०० मि.ली. पानी में १०० ग्राम गुड घोलें
- इस घोल में १०० मि.ली. सिरका, १०० मि.ली. ब्रॉडी या देशी शराब व १०० मि.ली ई. एम. द्रव मिलायें।
- घोल को प्लास्टिक कैन मे भरकर सील कर दें।
- घोल की घातकता बढ़ाने के लिये इसमे लहसुन की कुछ कलियाँ तथा हरी मिर्च को कुचलकर भी डाल सकते है।
- ५-१० दिन तक सड़ने दें।
- प्रतिदिन ढक्कन खोलकर गैस निकालते रहे।
- १० दिन में कीटनाशी तैयार हो जायेगा। इसे लगभग ३ माह तक प्रयोग कर सकते हैं।
- इस कीट नाशी का १:१००० के अनुपात में पानी में मिलाकर पौधों एवं फसलों पर स्प्रे करें।

३. **इ. एम. पौध अरक** : इस नुस्खे में ताजा हरे पौधों को ई. एम. के साथ सड़ाकर उनका अरक प्राप्त किया जाता है।

- २-३ किलो हरे पौधे/घास/ पत्तियाँ इत्यादि को कुचलकर पेस्ट बनायें।
- इस पेस्ट को १४ लीटर पानी में डालें।
- ४२ ग्राम गुड़ को थोड़े से पानी में घोलकर इसमें मिलायें
- अब इस घोल में ४२० मि.ली. ई. एम. डाल दें।
- पूरे घोल को एक प्लास्टिक ड्रम में डालकर अच्छी तरह ढककर रख दें। ड्रम को उपर तक भरें ताकि हवा के लिये कोई स्थान न बचे।
- सडन प्रक्रिया धीरे-धीरे शुरू होगी।
- पूरे द्रव को प्रतिदिन २-३ बार हिलाकर मिला दें।
- ५-१० दिन में अरक तैयार हो जायेगा। इस अरक का पी.एच ३.५ होना चाहिये तथा इसमे कोई दुर्गंध नहीं होनी चाहिए।
- इस द्रव को छानकर १:१००० के अनुपात में पानी में मिलाकर बुवाई से पहले खेत मे स्प्रे करें।
- खडी फसल पर प्रयोग हेतु १:५०० के अनुपात में पानी में मिलाकर स्प्रे करे। फसल पर पहली स्प्रे अंकुरण के पश्चात् प्रातः कालीन समय में करें इसके पश्चात सप्ताह में एक या दो बार स्प्रे करें।

४. **ई. एम. बोकाशी**

- बोकाशी ई. एम. एक प्रकार का कम्पोस्ट खाद है जिसे फसल अवशिष्ट के साथ थोड़ी मात्रा में मिलाकर प्रयोग किया जाता है और इसका उपयोग मिट्टी की उर्वरा शक्ति को बढ़ाने में किया जाता है।
- बोकाशी के लिये उपयुक्त जैव अवशिष्ट जैसे धान व गेहूँ का बूर, मछली अवशिष्ट, जन्तु अवशेष इत्यादि एकत्रित करें। सभी अवशिष्टों का कुल आयतन लगभग १५० लीटर पानी के समकक्ष हो।
- १५ लीटर पानी में १५० ग्राम गुड़ व ५० मि.ली. ई. एम. मिलायें।
- इस मिश्रण को उपरोक्त जैव अवशिष्ट के साथ मिलायें।
- पूरे मिश्रण को एक प्लास्टिक बैग में भरकर बंद कर दें।
- इस बैग को एक और बैग में डालकर सील कर दें।
- ३-४ दिन तक सडनें दें और किसी छायादार स्थान में रखें।
- ४ दिन पश्चात् बोकाशी उपयोग हेतु तैयार हो जायेगी इसे तुरंत प्रयोग करें।
- यदि तुरंत प्रयोग न हो सके तो पोलिथीन बैग में सील करके रखें।

**बोकाशी का प्रयोग :**

बोकाशी को सीधे कम्पोस्ट रूप में प्रयोग किया जा सकता है। बोकाशी को अन्य फसल अवशिष्ट के साथ मिलाकर भी प्रयोग किया जा सकता है। १.० हैक्टर के लिये १००-१५० किलो बोकाशी को उपयुक्त मात्रा में छोटे-छोटे टुकड़ों में काटे हुए फसल अवशिष्ट के साथ मिलायें और बुवाई से एक दिन पहले खेत में फैलाकर मिट्टी में मिला दें। इस मिश्रण पर यदि १:५०० के अनुपात में ई.एम. -१ व पानी का स्प्रे कर दिया जाय तो और भी अच्छे परिणाम प्राप्त होते हैं। बोकाशी फसल अवशिष्ट तथा ई. एम-१ के प्रयोग से कम्पोस्ट बनाने के कार्य से बचा जा सकता है।

# जैविक नाशीजीव नियंत्रण एवं उनकी वृहद उत्पादन तकनीक

**परिचय**

कृषि में हानिकारक जीव-जंतुओं एवं बीमारियों के नियंत्रण के लिए प्रायः रसायनिक कीटनाशकों (पैस्टीसाइड) का प्रयोग किया जाता है तथा माना जाता है कि रासायनिक पैस्टीसाइड ही प्रभावी और निर्भर करने योग्य उपादान हैं। परंतु इनके अव्यवस्थित एवं अत्यधिक प्रयोग के कारण अनेकों समस्याऐं जैसे महामारियों तथा कीटों की पुनउर्त्पत्ति, भोजन, जल, वायु एवं मृदा में विषावशेष, प्राकृतिक मित्र कीटों की हानि और पर्यावरण का विनाश इत्यादि बढ़ रहीं हैं। यदि यही क्रम चलता रहा तो यह हमारे पर्यावरण के लिए घातक सिद्ध होगा। इन सबके चलते कृषि, वानिकी और जन स्वास्थ्य कार्यक्रमों में नाशीजीव नियंत्रण के लिए मित्रकीटों एवं जैविक पैस्टिसाइडों का महत्व बढ़ रहा है। मित्रकीटों एवं जैविक पैस्टिसाइड के प्रयोग को बढ़ावा देने के लिए सरकारी तथा गैर सरकारी संस्थानों द्वारा अधिक से अधिक प्रयास किये जा रहे हैं। जैविक खेती पद्धति में नाशीजीव नियंत्रण में मित्रकीट एवं बायोपैस्टिसाइड प्रमुख अवयव है।

जैविक नाशीजीव नियंत्रण पद्धति में तीन प्रकार की विधियों व उपादानों का प्रयोग किया जाता है

१. मित्रकीटों जैसे ट्राइकोग्रामा, क्राइसोपर्ला का उत्पादन कर खेतों में छोंड़ना
२. जीवाणु नाशीजीव नाशकों जैसे बैसिलस, ट्राइकोडर्मा, स्यूडोमोनास इत्यादि का प्रयोग तथा
३. विभिन्न पौध अर्क का प्रयोग (जैसे नीम उत्पाद)

कुछ महत्वपूर्ण जैव नियंत्रकों जैसे ट्राइकोग्रामा, क्राइसोपरला, ट्राईकाडर्मा, एन.पी.वी. आदि के वृहत् उत्पादन विधियां निम्नलिखित हैं:-

**ट्राइकोग्रामेटिड अंडों का उत्पादन**

विश्व भर में ट्राइकोग्रामा कीटों की अनेक प्रजातियॉं हैं जो लगभग २०० से अधिक नाशीकीट प्रजातियों पर परजीवी के रूप में रहते हैं। भारत में ट्राइकोग्रामा की लगभग १८ प्रजातियां पायी जाती हैं। इनमें ट्राइकोग्रामा चीलोनिस, ट्राइकोग्रामा जैपोनिकम तथा ट्राइकोग्रामा एचेई प्रमुख है और अनेक प्रकार के नाशीकीटों के नियंत्रण में सहायक हैं। ये परजीवी जिन नाशी कीटों का नियंत्रण करते हैं उनमें प्रमुख हैं: गन्ना तना छेदक (चीलो तथा साइरोपोफागा), टमाटर फल छेदक, फली छेदक, हैलिकोवर्पा आर्मीजेरा, कटवर्म (एग्रोटिस) कपास वोलवर्म, पैक्टीनोफोरा गोसिपयेला, मक्का तना छेदक इत्यादि।

इन परजीवी जीवों के उत्पादन हेतु अमेरिका रूस इत्यादि देशों में सिटोट्रोगा सैरियेलैला कीट का उपयोग किया जाता है जबकि भारत में इसके स्थान पर चावल खाने वाले कोरसायरा सिफेलोनिका कीट का प्रयोग होता है।

**जीव विवरण:-**

ट्राइकोग्रामेटिड कीट छोटे परजीवी कीड़ों के विशाल वर्ग का प्रतिनिधित्व करते हैं। इनकी लंबाई ०.४ से ०.७ मि.मी. और सिर से चौड़ाई में ०.१५ से ०.२५ मि.मी. तक हो सकती है। ट्राइकोग्रामा में रंगभेद सीमित विस्तार तक प्रजातियों के अनुसार भिन्न भिन्न हैं। इनकी मुख्यतया ३ श्रेणियां हैं। हल्के रंगवाली जिसमें ट्राइकोग्रामा चीलोनिस शामिल है, हल्के से मध्यम रंग की ट्राइकोग्रामा फैसियेटम और गहरे रंगवाली ट्राइकोग्रामा जैपोनिकम शामिल हैं को प्रयोग किया जाता है। यद्यपि रंगभेद केवल पूरक लक्षण हैं परंतु वर्तमान जानकारी के अनुसार ट्राइकोग्रामा प्रजातियों को केवल उनके नर-जननांगों के आधार पर पहचाना जाता है। इसकी लगभग ३६ प्रजातियों को ६ वर्गों में वर्गीकृत किया गया है।

**जीव विज्ञान**

ट्राइकोग्रामेटिडस १६ से २४ घंटे में अंडे देते हैं। २ से ३ दिन में इनसे लार्वा निकलते हैं, ०२ दिन में लार्वा से प्यूपा बनते हौं प्यूपा अवस्था २ से ३ दिन तक रहती है। इसके पूरे विकास में ८ से १० दिन का समय गर्मियों में तथा ६ से १२ दिन का समय सर्दियों में लगता है।

**उत्पादन हेतु आवश्यक सुविधाएं**

**कोरसियरा सेफलोनिका गुणन हेतु आवश्यकताएं**

- कार्य हेतु मेजें
- सलोटेड एंगिल आयरन के रैक (कोरसायरा बाक्स रखने हेतु)
- ओविपोजिशन ड्रम्स
- ट्रे
- एल्यूमीनियम के कप
- कैंची व ब्रुश
- यूवी चेम्बर
- हाट एयर ओवन
- रेफ्रिजेरेटर
- एयर कंडीशनर
- एक्जास्ट फैन
- निर्वात पंप
- नपना गिलास
- कॉच या प्लास्टिक की नलिकाऐं
- रूई
- शहद
- फारमेलिन घोल
- कुचले हुए ज्वार के दाने

**ट्राइकोग्रामा उत्पादन हेतु**

- वर्किंग टेबल्स
- फ्लोरेसंट ट्यूब लाईट (१५ वॉट)
- कैंची एवं ब्रश
- कोरसायरा के अंडे
- ट्राइको कार्डस
- पॉलीथिन बैग्स (25 x 20 से.मी.)
- क्लिप
- शहद
- कल्चर बोर्ड ३ से.मी. छेद सहित
- कॉच की नलिकाऐं (१५ x ३ से.मी.)

**परिवहन हेतु**

- कैंची/चाकू
- कार्ड बोर्ड के बक्से
- थर्मोकोल शीट
- भूरे कागज
- गेंद
- चिन्ह पर्चियाँ

**उत्पादन विधि**

१. मानव खाद्य में प्रयुक्त होने वाले ज्वार के मोटे सफेद दाने प्राप्त करें। ज्वार के दाने किसी भी कीटनाशक द्वारा उपचारित नहीं होने चाहिए। इसकी जॉंच के लिए १०० ग्राम दाने प्रत्येक बैग से निकालकर उन्हें अच्छी तरह मसलकर उन पर २० प्रथम इंस्टार्स कोरसायरा लार्वा छोड़कर २-३ दिन तक जॉंच करें और प्रयोग किये कीटनाषक की पहचान मरे हुए लार्वाओं के आधार पर करें।

२. ज्वार की आवश्यक मात्रा को इस प्रकार पीसा जाता है कि प्रत्येक दाना ३-४ भागों में बँट जाए।

३. उसके बाद ज्वार को ओवन में १०० डिग्री से.ग्रे. पर ३० मिनट तक गर्म कर विसंक्रमित करें।

४. ज्वार पर ०.१ प्रतिशत फार्मेलिन के घोल का छिड़काव करें। इस उपचार से दानों पर फफूँदी नहीं उगेगी और उनमें नमी की मात्रा बनी रहेगी।

५. इसके पश्चात् ज्वार को हवा में सुखा लें।

६. अब प्रत्येक बक्से में २.५ कि.ग्रा. ज्वार डालें।

७. ६०० बाक्सों में ३०० सी.सी. कोरसायरा के अंडे डालकर ३० दिनो तक ढ़क कर रख दें। उसके बाद उसी राशन को ४५वें, ६०वें, १३५वें १८०वें और २२५वें दिनों बाद फिर कोरसायरा अंडों से इंफेस्ट करें। २७० एवं ३१५वें दिन केवल २०० बक्से ही इंफेस्ट करें।

८. पहले संक्रमित ६०० बाक्सों को ढ़क्कन लगाकर रैक्स में रख दें और बाकी बक्सों के लिए उसी प्रकार प्रक्रिया करें।

९. ४०वें दिन से मोथ निकलना शुरू हो जाती है और वे २ महीने तक निकलते रहते हैं। १० से ७५ मोथ रोजाना निकलते हैं। सबसे अधिक मोथ ६५वें और ७५वें दिन निकलते हैं।

१०. पैदा हुए मोथ को रोजना इक्कट्ठा करते रहें और विशेष प्रकार से बनाये गये ओवीपोजीशन पिंजड़ों में रख लें। मोंथ १०० दिन बाद निकलना बंद हो जाते हैं। अतः बक्सों को १०० दिन बाद साफ कर पुनः प्रयोग में लेना चाहिए।

११. बचे हुए मिश्रण से अंडों को इक्कट्ठा कर लिया जाता है जो १५, ३० और ४० मैंस की छलनी से गुजर सकते हैं और कागज के एक स्लोप पर धूल, मिट्टी के कण साफ करते हुए निकाल सकते हैं।

१२. अण्डों को पराबैंगनी किरणों (१५ वाट, ४५ मिनट तक २ फीट की दूरी) से उपचारित किया जाता है। ताकि उनसे शावक न निकल सकें।

१३. अण्डों को पहले से छेद किये हुए १५x१० से.मी. के ट्राइको कार्ड पर चिपका दिया जाता है और इस प्रकार प्रत्येक कार्ड से ८ टुकड़े प्राप्त किये जाते हैं। अण्डों को प्रोढ ट्राइकोग्रामा के समक्ष् ८:१ के अनुपात में २४ घंटों के लिए पेश किया जाता है। पोलीथीन के थैली में यदि अण्डे कार्डों के सम्पर्क में आ गये हैं तो अनुपात ३०:१ का होना चाहिए लेकिन ऐसी अवस्था में मादा को परजीविता के लिए मरने की स्थिति तक रखना चाहिए। परजीविता के बाद ६ दिन पुराने परजीवित अण्डों के कार्ड प्रयोग हेतु तैयार हो जाते हैं। कार्डों का एक जोडा इस प्रकार जोड़ा जाता है कि अण्डे एक-दूसरे का स्पर्श न कर पायें। प्रत्येक पोलीथीन थैली में २० ट्राइकोकार्ड पैक किये जाते हैं। पोलीथिन बैग में वुड वूल की शहद से उपचारित पट्टी रख दी जाती है ताकि यदि रास्ते में प्रौढ़ परजीवी विकसित होता है तो उसे भोजन प्राप्त करने में सुविधा रहे। २, ४ और ६ दिन पुराने परजीवित ट्राइकोग्रामा के अण्डे छेद किए हुए कैप्सूलों में भी पैक किये जा सकते हैं। छेदों से ट्राइकोग्रामा के बाहर निकलने

में आसानी रहेगी तथा शिकारी जीवों से इनका बचाव रहेगा। सामान्य कार्कों को भी इन अंडों के वाहक के रूप में प्रयोग कर सकते हैं। इन कार्कों में कार्क छेदक से इस प्रकार छेद किये जाते हैं कि ट्राइकोग्रामा तो इनसे बाहर आ सके लेकिन शिकारी जीव इनमें प्रवेश न कर पायें। ऐसे कार्क खेतों में फैलाकर रख दिये जाते हैं। खेतों में प्रयोग हेतु प्रति हैक्टेयर ४० स्थान चुने जाते हैं जहॉं २,४ तथा ६ दिन के परजीवित अंडे खेत में फैलाकर रख दिये जाते हैं तथा यही प्रक्रिया एक सप्ताह बाद फिर दुहराई जाती है।

सावधानियां

ट्राइकोग्रामा के अच्छे परिणाम प्राप्त करने हेतु निम्न सावधानियां ध्यान में रखनी चाहिए:-

1. ट्राइको कार्ड की पैकिंग में परजीवित सतह को अन्दर की तरफ रखना चाहिए।
2. उपभोक्ता की जानकारी के लिए ट्राइकोग्रामा के बाहर आने की तिथि कार्ड पर अंकित कर देनी चाहिए।
3. सीधी धूप से बचाव हेतु ट्राइको कार्ड के कटपीसों को पत्ती की आंतरिक सतह पर पिन से संलग्न कर देना चाहिए।
4. कार्ड के टुकड़ों को सुबह के समय या अवतरण समय से तुरन्त पहले स्टेपल करना चाहिए।
5. ट्राइको ऐग संचित कार्क को पूरे खेत में फैलाकर रखना चाहिए।
6. यदि प्रौढ़ ट्राइकोग्रामा को प्रयोग हेतु स्वतंत्र किया जाता है तो किसानों को ऐग पैरासीटाइज़ेशन तिथि के ८ दिन बाद थैलियां खोलनी चाहिए।
7. ध्यान रहे कि जिस खेत में ट्राइकोग्रामा प्रयोग किया गया है वहॉं कोई भी जीवनाशी रसायन का प्रयोग न किया जाये।

क्षेत्र प्रयोग-प्रतिस्थापन, वारम्बारता

| | |
|---|---|
| गन्ना तना छेदक एवं अगेती तना छेदक<br>Chilo infuscatellus | Trichogramma chilionis, sugarcane strain – ४ से ६ प्रतिस्थापन ५०,००० अंडे/हैक्टेयर १० दिन के अन्तर पर रोपाई के ४५ दिन बाद से |
| पिछेती तना छेदक<br>Scripophaga excerptais | Trichogramma chilionis, sugarcane strain – ४ से ६ प्रतिस्थापन ५०,००० अंडे/हैक्टेयर १० दिन के अन्तर पर रोपण के ६०वें दिन से शुरूआत |
| कलिका छेदक<br>Chilo auricilius<br>अन्तः कलिका छेदक<br>Chilo Sachhariphagusndicus<br>Gurdaspur borer (Acigona Steriellus) | Trichogramma chilionis, sugarcane strain – ८ से १० प्रतिस्थापन ५०,००० अंडे/हैक्टेयर १० दिन के अन्तर पर रोपण के ६०वें दिन से |
| कपास बोल वर्म<br>Helicoverpa armigera<br>गुलाबी बोल वर्म<br>Pechnophora gossypiella<br>Spolled Spiny bollworms, Earias Spp. | Trichogramma chilionis<br>Trichogramma achaeas cotton strain १,५०,००० अंडे/हैक्टेयर ६ सप्ताह के अन्तर पर ४५वें दिन से |
| मक्का तना छेदक<br>Chilo parteilus | Trichogramma chilonis ७५,००० अंडे/हैक्टेयर ४५ दिन बाद १० दिन के अन्तर पर कुल छः प्रतिस्थापन |
| टमाटर फल भेदक<br>Helicoverpa armigera | Trichogramma brasiliensis<br>५०,००० अंडे/हैक्टेयर ४५वें दिन के बाद १ सप्ताह के अन्तराल पर |
| धान का तना भेदक<br>Tryporyza chcertulas | Trichogramma japonicum<br>५०,००० अंडे/हैक्टेयर प्रति सप्ताह परजीवी के प्रतीत होने के साथ ही या रोपण के ३० दिन बाद एक ऋतु में कम से कम ६ बार प्रतिस्थापन करें। |
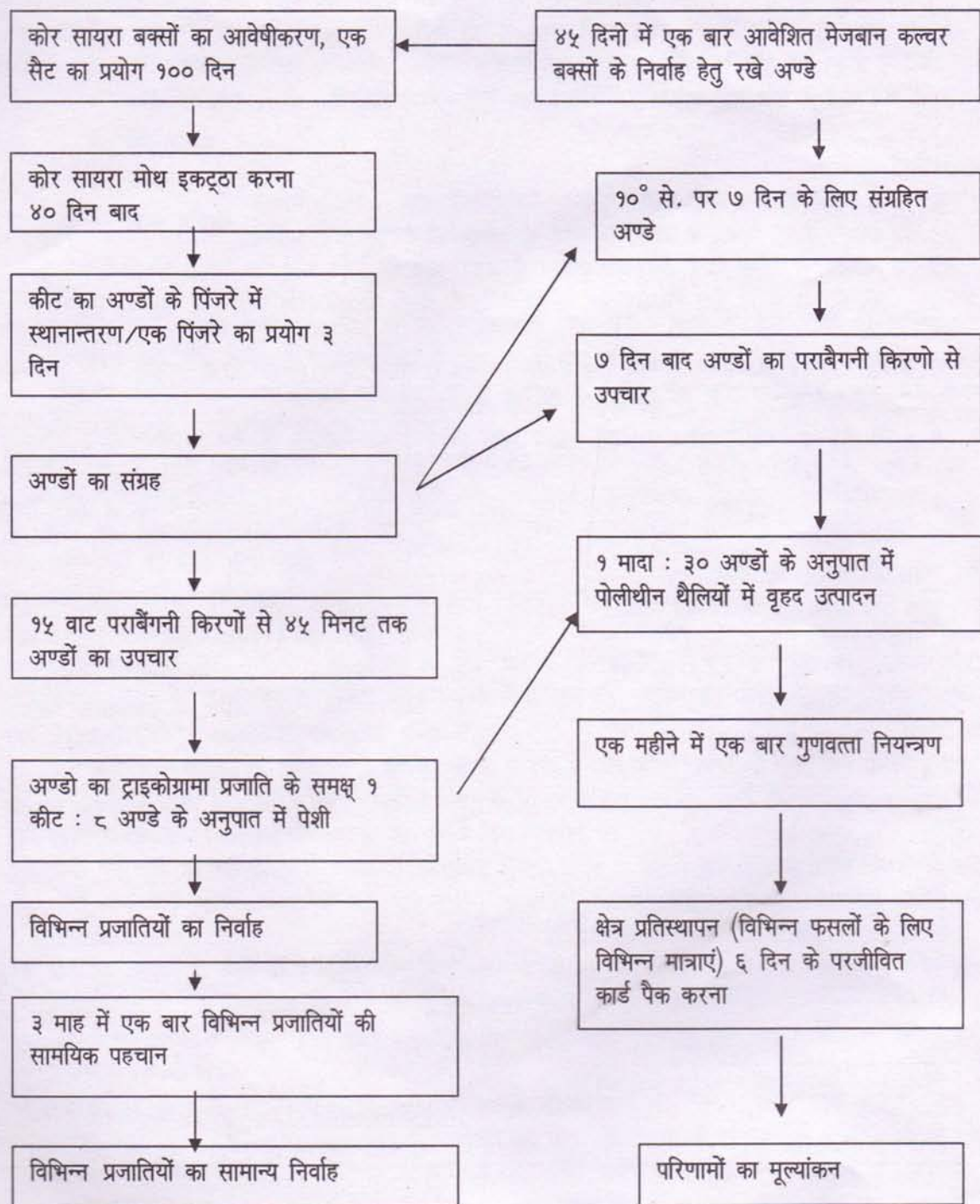
**ट्राइकोग्रामा उत्पादन विधि**

## ट्राइकोग्रामा प्रजातियों का भारत में प्रयोग
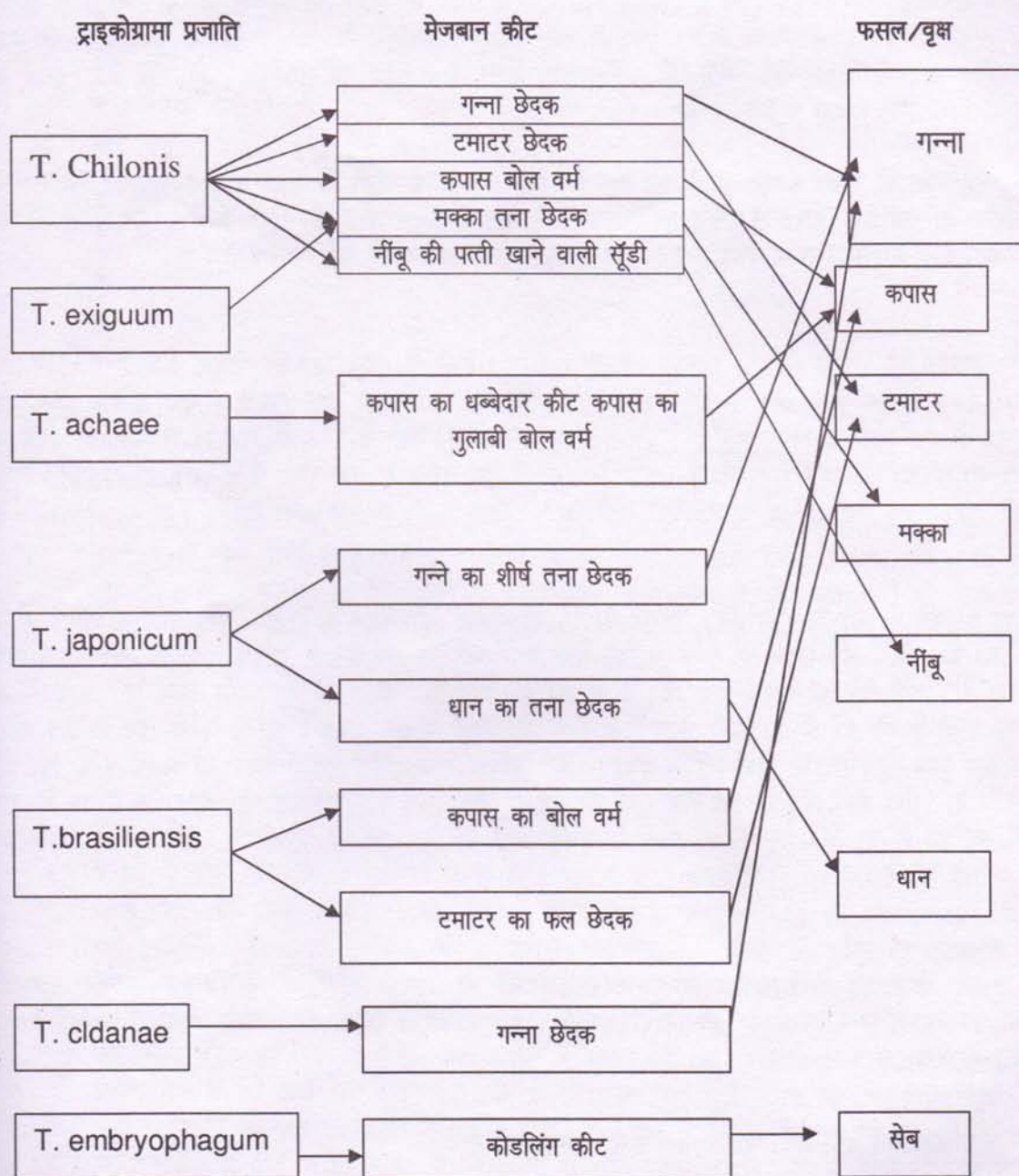
## क्राइसोपिड भक्षियों का वृहद उत्पादन

हाल के वर्षों में समन्वित नाशी जीव प्रबंधन में हरे लेस विग कीट के प्रयोग की सिफारिश की जा रही है। भारत में इसकी २१ वंशों से सम्बन्धित ६५ प्रजातियों की विभिन्न फसलों तथा पर्यावरण स्थितियों में पहचान की गई है। इनमें से कुछ प्रजातियाँ प्राकृतिक रूप से बहुधा पायी जाती है और मुलायम शरीर वाले कीटों की मुख्य प्राकृतिक शत्रु हैं। इनमें से क्राइसोपेरला कारनिया और मलादा बोनीनेसिस प्रमुख हैं।

हरे लेस विग शत्रु कीट को सफेद मक्खी, मिली बग तथा लेपीडोप्टेरा समूह के जीवों के अण्डे व छोटे लार्वा के नियंत्रण के लिए प्रयोग किया जा रहा है। भारत में इसके वृहद उत्पादन में धान के प्रमुख कीट कोरसायरा सिफैलोनीका के अण्डों का प्रयोग किया जाता है। क्राइसोपेरला के वृहद उत्पादन हेतु सक्षम् पालन तकनीक की आवश्यकता होती है।

### जीव विवरण

क्राइसोपिड सामान्यतया हरे रंग के होते हैं। इनकी लम्बाई १.० से १.३ से.मी. और सिर पर चौड़ाई १.० से २.० मि.मी. तक होती है। इनके ऐन्टीना लम्बे और बहुखंडित होते हैं। इनकी टाँगें सामान्यतया लंबी पतली व पाँच खंडों में विभाजित होती हैं। पंख विशाल और अंडाकार होते हैं। पिछले पंख अक्सर छोटे होते हैं। इनमें नियमित शिराविन्यास होता है जिसके कारण इस परिवार का नाम ग्रीन लेस विग पड़ा है। इनकी गुहा नर तथा मादा दोनो में ६ खण्डों में विभाजित होती है। मादा की गुहा नर की तुलना में फैली तथा बड़ी होती है।

### जीव विज्ञान

अंडे डंठलयुक्त हरे रंग के होते हैं। विभिन्न प्रजातियों में अंडे की लम्बाई ०.७ से २.३ मि.मी. तथा डंठल की लंबाई २ से २६ मि.मी. तक होती है। अंडे एकक या गुच्छों में दिये जाते हैं। अंडों का रंग सेने से पूर्व पीला सफेद और उसके बाद काला हो जाता है। अंडे देने का समय ३-४ दिन में समाप्त हो जाता है। लार्वा का रंग सफेद होता है। लार्वा में ३ इनस्टार दशायें होती हैं जो ११ से १३ दिनो में पूर्ण हो जाती हैं। लार्वा कोकून बुनते हैं जिनसे ५-७ दिन में प्रौढ़ कीट निकलता है। प्रौढ़ कीट निकलने के बाद बारंबार मिलन करते हैं। सामान्यतः प्री ओवीपोजीशन का समय ४-६ दिन में समाप्त हो जाता है। प्रौढ़ चौथे दिन से अंडे देना शुरू कर देते हैं और उनके अंडे देने का चरम समय ६ से १५ वें दिन तक होता है। नर १० से १२ दिन तक जीवित रहता है जबकि मादा ३५ दिन तक जी सकती है। मादा अपने जीवनकाल में ३००-४०० अंडे देती है।

### उत्पादन हेतु आवश्यक सुविधाएं

क्राइसोपरला प्रजाति के पालन के लिए एक ६x६ मीटर के कमरे की आवश्यकता पड़ती है जिसका तापमान २७+१° सेल्सियस, अपेक्षित आद्रता ७०प्रतिशत और सामान्य प्रज्जवलन ट्यूब द्वारा प्रदत्त रोशनी की लगातार आवश्यकता होती है।

१. **प्रौढ़ की देखभाल**
   - लोहे की रैक
   - प्रौढ़ अंडे सेने वाले ७ x ३० x ३० से.मी. आकार के पिंजरे।
   - तुला
   - कैची तथा ब्रुश
   - कॉटन वूल
   - टिशु पेपर व स्पंज
   - फ्रक्टोज
   - प्रोटीनेक्स
   - शहद

२. लार्वा पालन हेतु सुविधाएं

- ६० x २२ से.मी. की प्लास्टिक की पत्तियों के साथ २.५ वर्ग से.मी. का चौकोर डिब्बा।
- ल्यूवरर्स को ढ़कने हेतु एक्रेलिक शीट
- एल्यूमीनियम ट्रे
- प्लास्टिक कंटेनर्स - २७ x १८ x ६ से.मी. चौड़े मुँह के एक लीटर क्षमता वाले जार
- चिमटी, कैंची व ब्रुश
- कांच की नली ( ३ x १ से.मी.)
- आरगन डाई
- ब्राउन पेपर रोल
- कॉटन वूल
- गोंद चिपकाने हेतु
- शहद
- कोरसायरा के अंडे

उत्पादन प्रक्रिया

१. ३००० प्रौढ़ ओवीपोजीशन पिंजरो ( ७ x ३० x ३० से.मी.) में रखे जाते हैं। पिंजरे की दीवारों में चिकनी नायलोन की तारों वाली जाली लगा दी जाती है लेकिन खिसकाने वाला ऊपरी ढ़क्कन काले कपड़े के साथ लगा होता है। ऊपरी ढ़क्कन को चौथे दिन से प्रत्येक दिन खोला जाता है और मृत प्रौढ़ों को एकान्तर कर बाहर निकाला जाता है। प्रौढों को भोजन हेतु ओवीपोजीशन पिंजरे में प्लास्टिक प्लेट में निम्न द्रव रखा जाता है।
    - पीने का पानी
    - ५०प्रतिशत शहद
    - ४० ग्रा. प्रोटीनेक्स + ७० ग्राम फ्रक्टोज को २५० मि.ली. पानी में घोलकर बनाई गयी खुराक
    - अरंडी के परागकण

२. २४ घंटे के अंडों को स्पंज की सहायता से ऊपरी ढ़क्कन के काले कपड़े से निकाल लिया जाता है।
३. लार्वा पालन की पहली अवस्था में तीन दिन के क्राइसोपिड के अंडों को ०.६ सी सी कोरसायरा के साथ मिला कर २७x१८x६ से.मी. के प्लास्टिक के एक पात्र में रखा जाता है। मिलाने से पूर्व कोरसायरा अंडों को १५ वॉट की पराबैंगनी ट्यूब रोशनी में २ फीट की दूरी से २५ मिनट तक रखकर उपचारित किया जाता है। सेने पर लारवा खाना शुरू कर देते हैं। चौथे दिन लारवों को २.५ से.मी. के क्यूबीकल सैल में दूसरी अवस्था के पालन हेतु स्थानान्तरित कर दिया जाता है। प्रत्येक सैल में १६२ लार्वा आ सकते हैं। ०.३३ सी.सी. कोरसायरा अंडे प्रत्येक सैल में रखे जाते हैं। लूवर एक ओर से ऑरगनडाई या भूरी कागज की परत से सुरक्षित रखे जाते हैं और लारवा के स्थानान्तरण के बाद में एक्रीलिक शीट से ढ़ककर क्लैम्प से सुरक्षित बंद कर देते हैं।
४. तत्पश्चात्, १.३, १.३, २.६, २.६ और २.६ सी सी अंडे पांचवें, सातवें, आठवें, दसवें और बारहवें दिन लार्वा का प्रत्येक ल्यूवर्स में पूर्ण विकास सुनिश्चित करने के लिए प्रदान किये जाते हैं। २ मी. x १ मी. ४५ से.मी. के लोहे के रैक में १०० ल्यूवर्स आ सकते हैं जिनमें १६,२०० लार्वा होते हैं।
५. कोकून बनने के २४ घंटे बाद (जब कठोर हो जायें) कोकून इकट्ठे कर लिए जाते हैं और एक तरफ का आरगनडाई या कागज हटा दिया जाता है। प्रौढ़ों को कभी-कभी ल्यूवर्स से निकलने का मौका दिया जाता है और ग्लास विन्डो पैन्स के सहारे सक्सन द्वारा इकट्ठा कर लिया जाता है।

६. ल्यूवर्स का एक सैट १३-१५ दिन तक प्रयोग में रहता है। प्रयोग के बाद ल्यूवर्स धोकर, निर्जीवीकरण करके पुनः प्रयोग कर लिए जाते हैं।
७. प्रक्षेत्र प्रयोग के लिए ३ दिन पुराने अण्डे जो कि सेने को तैयार हैं भेजने से पूर्व कोरसायरा के अंडों में मिला देना चाहिए।

**सावधानियां:**

क्राइसोपिड के प्रभावी प्रयोग के लिए भेजने से पूर्व निम्न सावधानियां बरतनी चाहिए:

१. ३ दिन के क्राइसोपिड अंडों को जो सेने हेतु तैयार हैं प्लास्टिक जारों में कोरसायरा अंडों के साथ पैक किया जाना चाहिए और लार्वा तथा अंडों का सम्पर्क कम करने के लिए कागज की एक पट्टी बीच में रख देनी चाहिए।
२. एक दूसरे को खाने से रोकने के लिए केवल २-३ दिन पुराने लार्वा ही लकड़ी के बुरादे में मिलाकर खेतों में छोड़े जाने चाहिए।
३. लारवों को फसलों के पत्तों पर स्थापित होने हेतु प्रभात के समय जल्दी से जल्दी छोड़ना चाहिए।
४. क्राइसोपिड लारवों को सिफारिश की गई मात्रा के अनुसार छोंड़ना चाहिए लेकिन फलों के पेड़ों पर केवल संक्रमित पौधों पर ही छोंड़ना चाहिए।
५. जिन खेतों में परभक्षी छोड़े गए हैं उनमें जीवनाशक रसायनों का प्रयोग नहीं करना चाहिए।
६. क्राइसोपिड को अंडों की अवस्था में नहीं छोड़ना चाहिए क्योंकि ये अंडे परजीवियों द्वारा नष्ट किये जा सकते हैं।

**क्षेत्र प्रयोग - प्रतिस्थापन बारम्बारता**

सामान्यतः क्राइसोपिड की विभिन्न हानिकारक जीवों के प्रति १००,००० प्रथम इनस्टार लारवा प्रति हैक्टेयर, ४-६ लारवा/प्रति पौधा या १०-२०/फल पौधा/स्थिति के अनुसार दो प्रतिस्थापनो की सिफारिश की जाती है।

| | | |
|---|---|---|
| १. | कपास<br>ओल्ड वर्ल्ड वॉलवर्म<br>स्पॉटेड वालवर्म<br>गुलाबी वालवर्म<br>सफेद मक्खी<br>एफिड | Mallada boninesis or chrysoperla carnea / १००,००० अंडे प्रति हैक्टेयर १५ दिन के अन्तराल से ऋतु में दो बार |
| २. | तम्बाकू<br>एफिड<br>टोवेको कैटर पिलर<br>सफेद मक्खी | Chrysoperla carnea / १००,००० अंडे प्रति हैक्टेयर या ६ लारवा प्रति पौधा या १५ दिन के अन्तराल से ऋतु में दो बार |
| ३. | सूरजमुखी<br>हैड बोरर<br>एफिड | उपरोक्त (२) |
| ४. | मूंगफली<br>एफिड | Chrysoperla carnea / १००,००० अंडे प्रथम इनस्टार लारवा/ प्रति हैक्टेयर १५ दिन के अन्तराल पर ऋतु में दो बार |
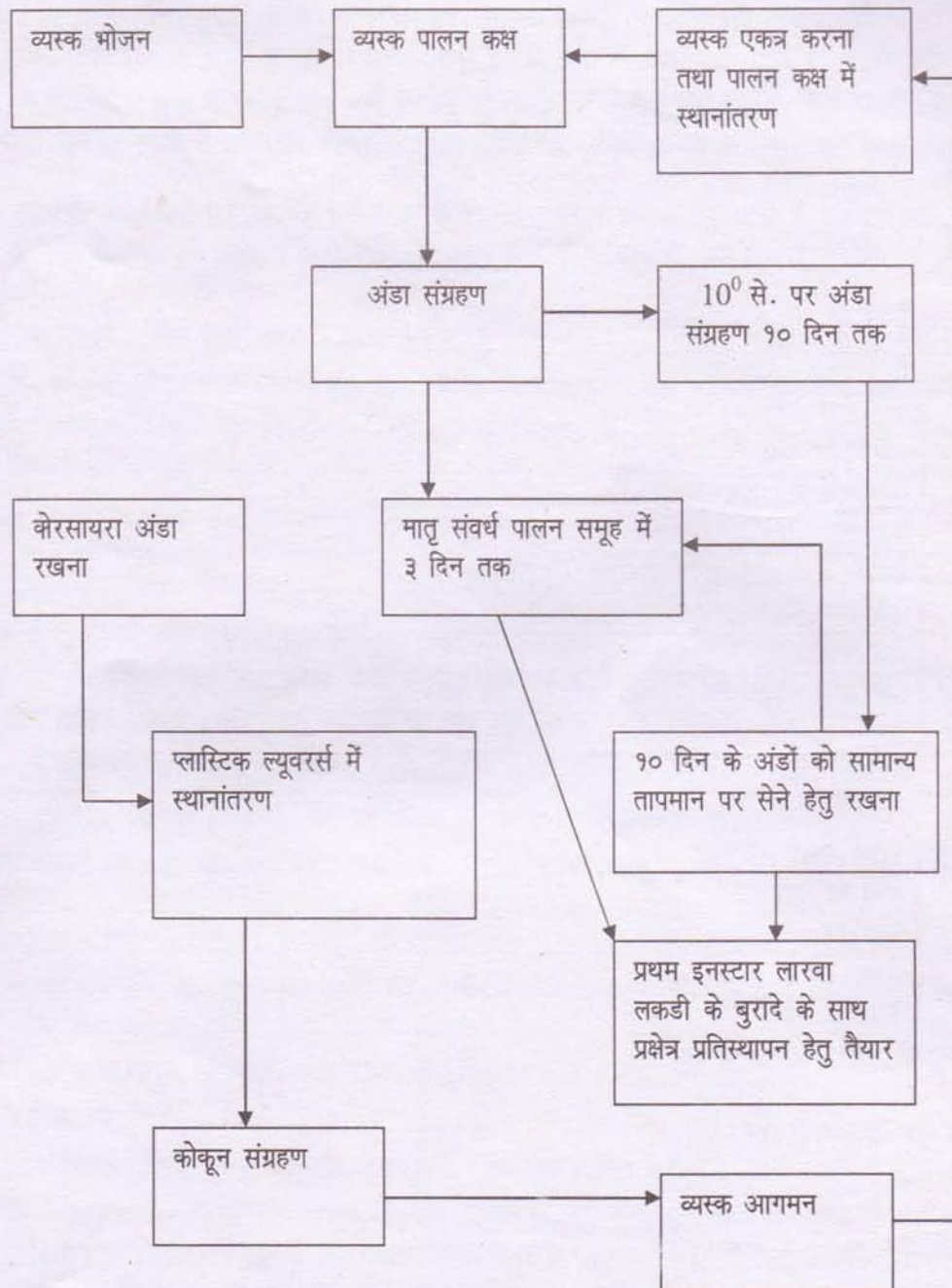
क्रइसोपरला उत्पादन तकनीक

## पादप रोगाणुओं के लिए जीव नियंत्रक कारकों का उत्पादन

### परिचय

वर्षा पर निर्भर दलहनों और तिलहनों में जड़ विगलन एक गंभीर बीमारी है। ४५ दिनों के आसपास की फसल में इस रोग का प्रकोप होता है। जीव नियंत्रक कारक मृदा में गुणन/प्रजनन करते हैं और मूल अचलों में रहते हैं तथा फसल वृद्धि की अंतिम स्थिति तक पादप रक्षा कर सकते हैं।

### माध्यम का तैयार करना

फंगस द्रव माध्यम में सतह पर अथवा लगातार कम्पन के द्वारा पैदा की जा सकती है। ये विभिन्न ठोस माध्यमों में भी पैदा की जा सकती है। विभिन्न माध्यमों के घटक निम्नलिखित हैं

### ट्राईकोडर्मा के लिए चयनित माध्यम

| | | |
|---|---|---|
| १ | मैग्नीशियम सल्फेट | ०.२ ग्रा. |
| २ | पोटेशियम हाईड्रोजन फॉस्फेट | ०.६ ग्रा. |
| ३ | अमोनियम नाईट्रेट | १.० ग्रा. |
| ४ | पोटेशियम क्लोराईड | ०.१५ ग्रा. |
| ५ | ग्लूकोज | ३.० ग्रा. |
| ६ | डेक्सोन-६० डब्लू पी या अपरोन (मैटेलेक्सिल-१) | ०.३ ग्रा. |
| ७ | पोटेशियम क्लोराईड पैन्टाक्लोरोनाइट्रो बैंजिन | ०.२ ग्रा. |
| ८ | रोज बेंगाल | ०.१५ ग्रा. |
| ९ | क्लोरोमफेनिकोल | ०.२५ ग्रा. |
| १० | अगर | १५.० ग्रा. |
| ११ | आसवित जल | १ लीटर |

### पोटैटो डैक्ट्रोज अगर

| | | |
|---|---|---|
| १ | आलू का गूदा | २०० ग्रा. |
| २ | डेक्सट्रोज | २० ग्रा. |
| ३ | अगर | १५ ग्रा. |
| ४ | आसवित जल | १ लीटर |

(आलू को उबाल कर उसका सार लें)

## ट्राईकोडर्मा का मृदा से प्रथ्यकीकरण

### विधि

- मृदा नमूना लेकर अच्छी तरह मिला कर बारीक कणों में परिवर्तित कर लें।
- नमूने मूल क्षेत्रों से इक्ट्ठे करने चाहिए।
- १० ग्राम मृदा २५० मि.ली. के नपना सिलेण्डर में लेकर आसुत जल (डिस्टील्ड वाटर) में घोलें और १०० मि.ली. तक आयतन बनायें।
- इस घोल को क्रमशः तनु करें। प्रथम पद में १ मि.ली. मृदा घोल को ६ मि.ली जल में मिलायें द्वितीय चरण में प्रथम घोल से १ मि.ली. को ६ मि.ली जल में मिलायें और इसी प्रकार आगे बढते हुऐ १०००० गुणा तक तनु घोल तैयार करें।

- इस घोल का एक मि.ली. पैट्री प्लेट में डालें और उसमें निर्धारित माध्यम (गरम करके ठण्डा किया हुआ) उडेल दें। तत्पचात् प्लेट को सीधी तथा बाईं तरफ घुमायें ताकि मिट्टी का तनु घोल माध्यम में अच्छी तरह मिल जाये।
- अब प्लेटों को ठोस होने तक रख दें। ठोस होने पर इन्हें इन्कूबेटर में २८±२ डिग्री से.ग्रे. पर ४-५ दिन तक रखें।

**निरीक्षण**

ट्राईकोडर्मा की कॉलोनियां शुरू में सफेद तथा बाद में हरी हो जाती हैं। इनको पहचान कर एक पृथक कॉलोनी, वायर लूप की सहायता से चुन ली जाती हैं और पुनः अगर प्लेट पर स्ट्रीक कर सुनिश्चित कल्चर तैयार कर लिया जाता है।

**ट्राईकोडर्मा का वृहद उत्पादन**

ट्राईकोडर्मा के वृहद उत्पादन हेतु विभिन्न विधियां निम्नलिखित हैं

**(१) गेहूँ चौकर माध्यम (हेनिस तथा साथी - १६७८)**

- १०० ग्रा. गेहूँ चौकर तथा २० मि.ली. जल को १५ पोण्ड भाप के दाब पर पर एक घण्टे तक निर्जीवीकरण करें।
- एण्टागोनिस्टिक फंगस का कोनीडियल सस्पेन्शन इसमें उड़ेल दें और प्रकाश की उपस्थिति में एक सप्ताह तक इन्क्यूवेट करें।
- इस कल्चर का १५० ग्रा., १ वर्गमीटर जमीन में मिलायें।

**(२) गेहूँ चौकर - बुरादा माध्यम (एलाड व साथी १६८०)**

- ३ भाग गेहूँ चौकर, एक भाग बुरादा तथा ४ भाग जल एक पोलीप्रोपेलिन बैग में लें।
- इसको लगातार दो दिन तक, एक-एक घंटे के लिए निर्जीवीकरण करें।
- अब एन्टागोनिस्टिक फंजाई से संरोपित करें।
- इसे १४ दिन तक ३० डिग्री सेंटीग्रेड पर प्रकाश की उपस्थिति में इन्क्यूवेट करें।
- इस कल्चर का १५० ग्रा. प्रति वर्ग मीटर जमीन पर प्रयोग करें।

**(३) द्रव किण्वीकरण विधि**

- ३० ग्रा. शीरा, ५ ग्रा. बेवरी की बाल तथा १ लीटर पानी मिलाकर १२१ डिग्री से.ग्रे. तापमान पर एक घंटे तक निर्जीवीकरण करें।
- एन्टागोनिस्ट्क फंगस की माईसेलियल डिस्क से इनोकुलेट करें।
- १० दिन तक इनक्यूबेट करें।
- ५०० मि.ली. फंगस को एक कि.ग्रा. टेलकम चूर्ण के साथ मिश्रित करें।
- हवा में सुखायें और कार्बोक्सिल मैथिल सैलुलाज स्टीकर के रूप में ५ ग्रा./कि.ग्रा. उत्पाद की दर से मिलायें।
- इस उत्पाद को बीजोपचार हेतु ४ ग्राम. प्रति कि.ग्रा., प्रयोग करें। यह उत्पाद ४ माह तक भंडारित किया जा सकता है। इस उत्पाद में कम से कम बीजाणु २ गुणा $१०^६$ cfu/g होने चाहिए।
- यदि फरमेंटर उपलब्ध न हो तो माध्यम को १०० मि.ली. से कम भरे कोनीकल फलास्कों में इनोकुलेट करें।
- टेलकम चूर्ण आधारित ट्राइकोडरमा सूत्रण का प्रयोग बीज उपचार हेतु दलहन, तिलहन, कपास इत्यादि में जड़ विगलन बीमारी हेतु प्रयोग किया जाता है।

## न्यूक्लीयर पोली हैड्रोसिस विषाणु का वृहद उत्पादन

ये कीट विषाणु प्राकृतिक रूप से उपस्थित होते हैं और लेपीडोप्टेरा, कोलेप्टेरा, डाएप्टेरा तथा अन्य बहुत से छोटे समूहों में बीमारी पैदा करते हैं। विषाणुओं में से बहुत से विषाणु मनुष्य, पालतू, अकशेरूकीय प्राणी तथा पौधों में बीमारी पैदा करने वाले विषाणु से नजदीक सम्बन्ध रखते हैं। केवल बैकुलो वायरस समूह के विषाणु इस प्रकार के खतरनाक सम्बन्ध नहीं रखते हैं और वे संकीर्ण गर्म रेन्ज रखते हैं।

बैकूलो वायरस समूह में अनुसंधान का उद्देश्य सामान्यतः न्यूक्लीयर पौली हैड्रोसिस विषाणु और ग्रेनूलोसिस विषाणु के नियंत्रण तक ही सीमित हैं। हमारे देश में एन.पी.वी. - *(न्यूक्लीयर पौली हैड्रोसिस वायरस) को दो मुख्य पोलीफेगस पैस्ट -स्पोडोप्टेरा लितूरा और हैलीकोवरपा अर्मिजेरा के नियंत्रण के लिए प्रयोग किया गया है।*

### (१) स्पाडोप्टेरा लितूरा न्यूक्लीयर पौली हैड्रोसिस वायरस (एस.एन.पी.वी.)

स्पोडोप्टेरा लितूरा जो कि पोलीफेगस हानिकारक जीव है, तम्बाकू सुंडी के नाम से भी जाना जाता है। यह तम्बाकू की पौध शाखाओं में गंभीर हानि पहुँचाता है। यह कभी-कभी फूल गोभी, पत्ता गोभी, अरण्डी, कपास, मूँगफली, आलू और रिजका पर भी आक्रमण करता है। यह १०० उगाये जाने वाले तथा जंगली पौधों से अभिलेखित किया गया है। जब इसका प्रकोप होता है तो यह बहुत सी फसलों को हानि पहुँचाता है। यदि उपयुक्त उपाय नहीं किये जायें तो यह जीव पूरी नर्सरी के पत्तों को उड़ा सकता है। यह जीव ग्रस्त पौध के साथ रोपी गयी फसल में भी जा सकता है जहाँ पर इसका लारवा काफी हानि पहुँचाता रहता है।

### (१.१) स्पोडोप्टेरा लितूरा के लिए उत्पादन विधि

स्पोडोप्टेरा लितूरा का संवर्धन अरण्डी, फूल गोभी, रिजका और तम्बाकू के खेतों से अंडे इकट्ठा करने के साथ शुरू होता है। खेतों से इक्ट्ठे किये गये अंडे पृथक रूप से पनप रहे पैरासीटोएडस तथा रोगों को समाप्त करने के लिए पोषित किये जाते हैं।

इनके सम्वर्ध प्रकाशीय पिंजरों से इक्ट्ठा किये गये ग्रेविड मादाओं से भी तैयार किये जा सकते हैं। एक बार सम्वर्ध तैयार होने पर वृहद उत्पादन प्रयोगशाला में पहली उत्पत्ति से स्थापित हो जाता है।

नये निकले कीटों के जोड़ों को पूर्ण हवादार प्लास्टिक कन्टेनर में (२० गुणा १५ से.मी.) रखा जाता है। कन्टेनर की अन्दर की दीवारें अंडे प्राप्त करने के लिए कागज से संचित की जाती हैं। कंटेनर की तली में सोख्ता कागज से ढ़की हुई स्पंज लगाई जाती है। कीटों को ५० प्रतिशत शहद व पानी का घोल दो रूई के फायों के द्वारा प्रदान किया जाता है जो कि प्लास्टिक के प्यालों में रखे जाते हैं। अण्डे जो सामान्यतः बैचो में पेपर पर दिये जाते हैं, काटकर निकाल लिये जाते हैं। ताजा दिये गये अंडों को १० प्रतिशत फोरमलिन में ३० मिनट तक डुबोकर निर्जीवीकरण किया जाता है। उसके बाद ३० मिनट तक चलते पानी में धोया जाता है और सोख्ता कागज से सुखा कर कांच की निर्जीवीकृत नलियों में सेने हेतु रख दिया जाता है। ताजा अंडों को ०.०५ प्रतिशत के सोडियम हायपोक्लोराईड विलियन में ५ मिनट तक डुबोकर भी निर्जीवीकृत किया जा सकता है। इन अंडों को साफ तथा चलते हुए पानी से कई बार धोया जाता है ताकि सोडियम हायपोक्लोराईड की छोटी सी मात्रा भी उन पर न रह जाये। अब इन अण्डों को वयस्क अवतरण कक्ष में रख दिया जाता है। १० दिन पश्चात् अवतरित नर व मादा कीटों को उनके कक्षों से एकत्रित कर लिया जाता है।

### १.२. स्पोडोप्टेरा लिटूरा विषाणु (S-NPV) का उत्पादन

स्पोडोप्टेरा लिटूरा मातृ संवर्ध संग्रह से ९० प्रतिशत, ७-९ दिन के चतुर्थ इनस्टार लार्वा (जिनके शीर्ष की चौड़ाई १.१ मि.मी. हो) का S-NPV के उत्पादन हेतु प्रयोग किया जाता है। शेष १० प्रतिशत प्रयोगशाला में वंश वृद्धि हेतु छोंड़ दिये जाते हैं। संरोपण से पूर्व एकत्रित लार्वा को ८ घंटे तक भूखा रखा जाता है।

एक अलग बोतल में २५० मि.ली. जल में S-NPV का संरोपण द्रव (जिसमें लगभग १०$^{८}$ POB/मि.ली. हो) तैयार किया जाता है। साफ धुली अरंडी की पत्तियों को १५-२० मिनट तक S-NPV के घोल में डुबोकर रखा जाता है। तत्पश्चात् इन संक्रमित पत्तियों को अगले दो दिन तक लार्वाओं को खिलाया जाता है। दो दिन पश्चात् शेष अवधि के लिए लार्वा को स्वस्थ अरंडी पत्तियाँ दी जाती हैं। पत्तियाँ मुरझा न पायें इसलिए उनके डन्ठलों को पानी में डुबोकर रखा जाता है तथा प्रतिदिन ताजा पत्तियाँ रखी जाती हैं।

लार्वा को S-NPV से संक्रमित करने का कार्य S-NPV संक्रमित कृत्रिम खाद्य खिलाकर भी किया जा सकता है। ४-५ दिन में लार्वा में S-NPV संक्रमण के लक्षण दिखाई देने लगते हैं तथा ७ दिन पश्चात् वे मरने लगते हैं। S-NPV संक्रमित लार्वा की पहचान उनके निचले भाग की त्वचा के रंग से की जा सकती है जो धीरे-धीरे गुलाबी से सफेद हो जाती है। लगभग ३०० संक्रमित मृत लार्वा को एक पात्र में पानी में डालकर ३ दिन तक सड़ने के लिये छोड़ दिया जाता है। ३ दिन में इन लार्वा की त्वचा फट जाती है और सफेद रंग का द्रव बाहर आ जाता है। एक मिक्सर में इस मिश्रण को घोटकर कपड़े द्वारा छान लेते हैं। एक सप्ताह में विषाणु धीरे-धीरे नीचे इक्ट्ठा हो जाते हैं। ऊपर इक्ट्ठा हुए द्रव को निथारकर अलग कर दिया जाता है। तल में एकत्रित विषाणु समूह को अलग कर पानी में मिला दिया जाता है। अतिरिक्त शुद्धता हेतु इस जलीय मिश्रण को ५-१० मिनट तक ५०० rpm पर सेन्ट्रीफ्यूज करें तथा ऊपरी द्रव को अलग कर अवक्षेप फेंक दें। कुछ समय में S-NPV नीचे बैठ जायेंगे जिसे निथार कर अलग कर लें प्राप्त सफेद अवक्षेप को जल में मिलाकर २५०० rpm पर सेन्ट्रीफ्यूज करें और शुद्ध S-NPV, POBs (Poly Oclusion Bodies) प्राप्त करें। शुद्ध POBs को जल में मिलाकर हीमोसाइटोमीटर की मदद से उसकी सांद्रता संख्या की गणना करें। POBs संख्या को प्रति लार्वा या प्रतिग्राम लार्वा भार रूप में दर्शाया जा सकता है। प्राप्त POBs को कैल्शियम क्लोराइड की उपस्थिति में सुखाया जा सकता है या एसिटोन अवक्षेपण विधि द्वारा अलग कर निर्धारित रसायनों (Spreader & Wetting agents) के साथ मिलाकर अंतिम उत्पाद तैयार किया जाता है।

उपयोग विधि तथा प्रभाविता जाँच

१२५ लीटर पानी में २५० लार्वा उत्पाद का S-NPV, १ प्रतिशत शक्कर तथा ०.०१ प्रतिशत टीपोल (द्रव साबुन) के साथ मिलाकर एक हैक्टेयर नर्सरी में शाम के समय स्प्रे रूप में प्रयोग करें। १५ दिन के अंतराल पर तीन बार स्प्रे आवश्यक है। पहला स्प्रे पहली पत्ती निकलने पर या बुवाई के ३ सप्ताह बाद किया जाना चाहिए। दूसरे व तीसरे स्प्रे के बीच २ प्रतिशत नीम बीज अर्क का भी प्रयोग किया जा सकता है। नर्सरी के चारो ओर अरंडी के पौधों को ट्रेप फसल के रूप में लगायें। अरंडी के पौधों पर जैसे ही अंडे लार्वा रूप में आने लगें तुरंत S-NPV का स्प्रे करना चाहिए तथा एक हफ्ते के अंतराल पर तीन से चार बार स्प्रे करें।

अन्य फसलों पर पहला स्प्रे लार्वा दिखाई देने पर करें तथा उसके उपरांत ७-१० दिन के अंतर पर २-३ बार स्प्रे करें। एक बार उपयोग हेतु २५० से ४५० लार्वा समकक्ष प्रति हैक्टेयर पर्याप्त हैं। स्प्रे द्रव में १ प्रतिशत शक्कर तथा ०.०१ प्रतिशत टीपोल मिलाना न भूलें। यदि पावर स्प्रेयर का प्रयोग कर रहे हों तो केवल एक चौथाई जल की मात्रा का प्रयोग करें।

**हैलिकोवर्पा आर्मीजेरा NPV (H-NPV)**

हैलिकोवर्पा आर्मीजेरा कीट पूरे भारतवर्ष में फैला हुआ है और अनेक प्रकार की फसलों व पौधों पर आक्रमण करता है। कर्नाटक, आंध्रप्रदेश, महाराष्ट्र, तमिलनाडु, उड़ीसा, पंजाब, गुजरात तथा उत्तर प्रदेश में यह एक विकट समस्या है और कई प्रमुख फसलों जैसे कपास, अरहर, चना, टमाटर, भिंडी, सूरजमुखी, ज्वार तथा मक्का इत्यादि का यह एक प्रमुख नाशीजीव कीट है।

H-NPV विषाणु इस कीट के प्रबंधन में एक प्रभावी जैविक कीटनाशी के रूप में प्रयुक्त किया जा सकता है। इसे प्रकृति में संक्रमित हैलिकोवर्पा के लार्वा से प्राप्त किया जा सकता है। चूँकि विषाणु केवल हैलिकोवर्पा के लार्वा पर ही उगाया जा सकता है अतः उत्पादन प्रक्रिया में मेजबान लार्वा का उत्पादन एक प्रमुख चरण है।

### हैलिकोवर्पा आर्मीजेरा की उत्पादन विधि

उत्पादन प्रक्रिया की शुरूआत् विभिन्न फसलों से वयस्क कीट एकत्रित कर की जाती है। वयस्क कीट प्रकाश ट्रैप द्वारा भी एकत्रित किये जा सकते हैं। हैलिकोवर्पा के संक्रमित लार्वा विभिन्न फसलों से सीधे भी एकत्रित किये जा सकते हैं जिनसे विषाणु संवर्ध प्राप्त किया जा सकता है। विषाणु संवर्ध, स्थापित प्रयोगशालाओं से भी लिया जा सकता है। इस प्रकार प्राप्त शुद्ध संवर्ध की स्वस्थ प्रजाति को जीवाणुविरहित अवस्थाओं में मानकीकृत कर रखा जा सकता है।

### उत्पादन प्रक्रिया

- लगभग ५५० वयस्क कीटों की प्रतिदिन उपलब्धता सुनिश्चित करें
- इन कीटों से लगभग २२००० अंडे प्रतिदिन प्राप्त होंगे
- लगभग १०० जोड़ों को एक ओवीपोजिशन केज में रखें
- आवीपोजिशन केज लोहे के फ्रेम से निर्मित एक बेलनाकार (५० से.मी. ऊँचा तथा ३० से.मी. चौड़ा) केज है जिसके चारो ओर काला कपड़ा लगा होता है। इस केज में सतह से लगभग ५ से.मी. ऊपर एक प्लास्टिक जाली पर पानी व शहद में डूबे फाहे एक छोटे पात्र में रखे जाते हैं।
- कपड़े के आवरण में दोनों सिरों पर लगभग २० से.मी. की एक जिप लगी होती है जिसे आवश्यकतानुसार खोला या बंद किया जा सकता है। आवरण को दोनो सिरों पर रबर बैंड लगाकर बाँध दिया जाता है।
- पूरे केज को ४०x४०x५ से.मी. की ट्रे में एक पानी में भीगे स्पंज के ऊपर रख दिया जाता है।
- पूरी उत्पादन प्रक्रिया में तापमान २६° से. तथा आद्रता ६० से ६० प्रतिशत पर रखी जानी चाहिए
- वयस्क कीट पूरे कपड़े पर फैलाकर अंडे देते हैं।
- प्रतिदिन कपड़ा आवरण बदलें। कपड़ा १० प्रतिशत फार्मेलिन घोल से निर्जीवीकृत किया होना चाहिए।
- अंडों को भी पहले ०.२ प्रतिशत हाइपोक्लोराइट घोल में ५-७ मिनट तक डुबोयें, फिर १० प्रतिशत सोडियम थायोसल्फेट घोल से उपचारित कर ५ से ६ बार पानी से धोयें
- वाशिंग मशीन द्वारा अंडे एकत्रित करें और पेपर टावल पर फैलाकर सुखा लें
- सूखे अंडों को कपड़े के टुकड़ों सहित एक दो लीटर क्षमता फ्लास्क में जिसमें गीली रूई रखी गयी है में रख दें और रूई के प्लग लगाकर बंद कर दें फ्लास्क के निचले हिस्से को एल्यूमीनियम फॉइल से ढ़क दें।

### संश्लेषित आहार पर लार्वा पालन

हैलिकोवर्पा लार्वा को चना आधारित आहार पर पाला जाता है जिसका विवरण निम्नानुसार है:

| क्र.सं. | आदान | मात्रा |
|---|---|---|
| भाग-क | | |
| १ | चना आटा | १०५ ग्राम |
| २ | मिथाइल पैरा हाइड्रोक्सी बैंजोएट | २ ग्राम |
| ३ | सौरविक एसिड | १ ग्राम |
| ४ | स्ट्रैप्टोमाइसिन सल्फेट | ०.२५ ग्राम |
| ५ | १० प्रतिशत फारमेलिन घोल | २ मि.ली. |

भाग- ख

| | | |
|---|---|---|
| ६ | अगर-अगर | १२.७५ ग्रा. |
| **भाग -ग** | | |
| ७ | एस्कोर्बिक एसिड | ३.२५ ग्रा. |
| ८ | यीस्ट की गोलियाँ | २५ ग्रा. |
| ६ | मल्टीविटा प्लेक्स | २ कैप्सूल |
| १० | विटामिन ई | २ कैप्सूल |
| ११ | आसुत जल | ७८० मि.ली. |

३६० मि.ली. जल में भाग (क) अवयवों (फार्मेलिन को छोंड़कर) को मिलाकर मिक्सर में २ मिनट तक घोटें। अब इसमें भाग (ग) अवयवों को मिलाकर १ मिनट तक मिक्सर को चलायें।

शेष ३६० मि.ली. जल में भाग (ख) अवयव (अगर-अगर) डालकर उबालें तथा अगर घुलने पर भाग क व ग के मिश्रण के साथ मिलायें तथा १ मिनट तक घोटें। अंत में फार्मेलिन घोल डालकर फिर १ मिनट तक मिक्सर से मिलायें। उपरोक्त आहार को आवश्यकतानुसार पैट्री प्लेट में या नाइलोन की जाली पर या पालन ट्रे में फैला दें। एल्यूमीनियम फाइल से ढ़के फ्लास्कों से प्रकाश रेखा के पास एकत्रित लार्वा एक ब्रश की मदद से निकालें और आहार पर डाल दें।

लगभग २२० लार्वा आहारयुक्त प्लास्टिक जाली पर डालकर एक हवादार २५x१४x११ से.मी. आकार के प्लास्टिक डिब्बे में रख दें। ऐसे लगभग १०० डिब्बे प्रतिदिन बनायें जिन्हें लगभग ५-७ दिन तक रखना होगा। लगातार प्रक्रिया प्रचालन हेतु लगभग ८०० डिब्बों की आवश्यकता होगी। अनेक कक्षों वाली ट्रे में भी लार्वा पालन किया जा सकता है।

- २२००० अंडों से लगभग २०,६०० लार्वा प्राप्त होंगे (५ प्रतिशत अंडे मर जाते हैं)
- ५-७ दिन पश्चात् १८,८१० लार्वा प्राप्त होंगे जिनमें से लगभग १५११० लार्वा विषाणु उत्पादन में काम आयेंगे तथा शेष लगभग ३७०० लार्वा वंश वृद्धि हेतु आवश्यक हैं।
- ५-७ दिन में प्रत्येक लार्वा हेतु लगभग २ ग्राम आहार की आवश्यकता होती है अतः पूरे चक्र हेतु कुल ४. १८ किलो आहार की खपत होगी
- विषाणु उत्पादन हेतु ५ से ७ दिन आयु के लार्वा हेतु प्रति लार्वा ४ ग्राम अर्थात् १५००० लार्वा हेतु लगभग ६ किलो आहार की आवश्यकता होगी
- २० प्रतिशत वंश वृद्धि लार्वा को गर्म कल्चर यूनिट में रखा जाता है जिसमें वे प्यूपा अवस्था में बदलने लगते हैं। लगभग १८-१६ दिन की आयु में वे पूर्ण रूप से प्यूपा में बदल जाते हैं। प्यूपा को एकत्र कर ०.२ प्रतिशत सोडियम हाइपोक्लोराइट तथा सोडियम थायोसल्फेट घोल से उपचारित कर पानी से धोया जाता है तथा सोख्ता कागज पर फैलाकर सुखा लेते हैं।
- नर व मादा प्यूपा को अलग-अलग कर छोटे-छोटे पात्रों में रखकर वयस्क अवतरण केजों में नम स्पंज के ऊपर रख देते हैं। वयस्क अवतरण केज पूर्व में उल्लिखित ओवीपोजिशन केज जैसे ही होते हैं।
- हैलिकोवर्पा आर्मीजेरा की अंडा. लार्वा, प्यूपा तथा वयस्क अवस्था की आयु क्रमशः ३-४, १८-२०, ७-८ तथा ७-६ दिन होती है। मादा कीट का ओवीपोजीशन काल ५ दिन का होता है।

**H-NPV विषाणु का उत्पादन**

- विषाणु उत्पादन हेतु लार्वा संक्रमण अनेक कक्षों वाली ट्रे में किया जाता है। प्रत्येक कक्ष में लगभग ४ ग्राम आहार डालकर जमने दें और जमने के पश्चात् उसकी ऊपरी सतह पर विषाणु घोल फैला दें।

- विषाणु घोल की सांद्रता लगभग १८x१०$^{६}$ POB प्रति मि.ली. होनी चाहिये।
- प्रत्येक कक्ष में ५-७ दिन आयु के एक लार्वा को रखें तथा ट्रे को २६° से. तापमान तथा ६० से ८० प्रतिशत आद्रता पर इन्क्यूबेट करें।
- ७ दिन पश्चात् संक्रमित तथा मृत लार्वा एकत्रित करें।
- संक्रमित व मृत लार्वा से पूर्व में दी गई प्रक्रिया (S-NPV उत्पादन विधि) से विषाणु द्रव प्राप्त करें तथा शुद्ध कर संग्रहित करें।

**उपयोग तथा प्रभाविता जॉच**

H-NPV का उपयोग चना, अरहर, बीन, कपास, सूर्यमुखी तथा टमाटर की फसल में हैलीकोवर्पा आर्मीजेरा की रोकथाम हेतु किया जाता है। २५० लार्वा समकक्ष विषाणु द्रव एक हैक्टेयर हेतु पर्याप्त है। स्प्रे हेतु विषाणु द्रव के साथ ०.५ प्रतिशत शक्कर, ०.५ प्रतिशत मूँगफली खली तथा ०.०५ प्रतिशत टीपोल डालकर प्रयोग करें।

# नाशी जीव प्रबंधन में नीम का महत्व

### नीम द्वारा नाशी जीव प्रबंधन

पिछले कुछ दशकों के अनुसंधान से यह सिद्ध हुआ है कि नीम उत्पाद बहुत से नाशी जीव कीटों के वृद्धि नियंत्रक तथा भोज्य निरोधक का कार्य करते हैं। अनेक प्रकार के नाशी जीव कीटों व सूत्रकृमियों के विरुद्ध नीम उत्पाद या तो प्रतिकर्षी का कार्य करते हैं या उनकी भोजन प्रक्रिया में बाधा उत्पन्न कर उनका नियंत्रण करने में सहायक हैं। वास्तव में नीम उत्पाद इतने प्रभावी हैं कि उनकी नाम मात्र की उपस्थिति से ही अनेक नाशी जीव कीट पौधों पर आक्रमण नहीं कर पाते हैं। रसायन कीटनाशी जहर हैं जबकि नीम उत्पाद कीटों के हारमोन तंत्र पाचन तंत्र तथा स्नायु तंत्र पर प्रभाव डालते हैं। इसी कारण कीटों में नीम उत्पादों के विरूद्ध प्रतिरोधी क्षमता नहीं उत्पन्न हो पाती है। नीम उत्पादों में उपलब्ध प्रभावी कारक लिमोनोइड प्रकृति के रसायन हैं। नीम लिमोनोइड पूर्णतया सुरक्षित होने के साथ-साथ प्रभावी कीट नाशी, सूत्रकृमि नाशी तथा फफूँदी नाशी का कार्य करते हैं और फसल सुरक्षा प्रबंधन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। एजाडिरेक्टीन, सैलेनिन, मेलियान्ट्रियोल तथा निम्बीन आदि नीम में पाये जाने वाले प्रमुख लिमोनोइड रसायन हैं जो विभिन्न नाशी जीवों पर प्रभाव डालते हैं। लगभग ६० प्रतिशत तक नाशी जीव कीट नीम से प्रभावित होते हैं। नीम रसायन यद्यपि कीटों को तुरंत नहीं मारते हैं परंतु उनकी बढ़वार तथा प्रजनन प्रक्रिया में व्यवधान कर उनका नियंत्रण करते हैं।

### विभिन्न नाशीजीव कीटों पर नीम का प्रभाव

विभिन्न प्रकार के नीम अर्क विभिन्न कीटों पर निम्नानुसार प्रभावी हैं:

- कीटो के अंडों, लार्वा तथा प्यूपा अवस्थाओं के विकास में व्यवधान कर
- लार्वा या निम्फ अवस्था का विकास अवरूद्ध कर
- प्रजनन प्रक्रिया में बाधा उत्पन्न कर
- लार्वा तथा वयस्क कीटों को प्रतिकर्षित कर
- मादा के अंडे देने की प्रक्रिया में व्यवधान कर
- वयस्कों में नपुसंकता कर
- लार्वा तथा वयस्कों में जहर के रूप में कार्य कर
- भोजन ग्रहण प्रक्रिया में व्यवधान कर
- पाचन तंत्र में व्यवधान कर
- चिटिन उत्पादन में कमी कर इत्यादि

नीम यद्यपि अनेक प्रकार कार्य करता है परंतु उसका सर्वाधिक प्रभाव लार्वा की मोल्टिंग प्रक्रिया को बाधित करने से होता है। इसके इस गुण से अनेक प्रकार की नाशीजीव कीट प्रजातियों का उन्मूलन किया जा सकता है। नीम उत्पाद लगभग ४०० से ५०० कीट प्रजातियों की रोकथाम में सहायक होने के साथ-साथ मानव पशुओं तथा मित्रकीटों (कीटभक्षी) के लिए पूर्ण रूप से सुरक्षित हैं। नीम से जिन नाशीकीटों का प्रबंधन किया जा सकता है उनमें प्रमुख हैं:

- बैलाटटोडिआ
- कैइलिफरस
- डर्मीप्टेरा
- डिप्टेरा
- एन्सीफेरा

- हिटरोप्टेरा, हायमेनोप्टेरा, आइसोप्टेरा, लेपिडोप्टेरा, फासमिडा, साइफनोप्टेरा तथा थायसेनोप्टेरा, आस्ट्रेकैड की एक प्रजाति, माइटस की अनेक प्रजातियों,
- अनेक प्रकार के सूत्रकृमि, स्नेलस्, फफूँदी इत्यादि।

पश्चिमी गोलार्ध के सबसे विकट नाशीकीट आर्मीवर्म की रोकथाम में भी नीम बहुत प्रभावी है। १० मि.ग्रा. प्रति हैक्टेयर एजाडिरिक्टीन की अल्प मात्रा से भी इस नाशीकीट का प्रभावी प्रबंधन संभव है। नीम अर्क इन कीटों हेतु बाजार में उपलब्ध रसायनिक कीटनाशियों के समकक्ष प्रभावी है तथा इसकी इसकी प्रभावशीलता के कारण अमेरिका की पर्यावरण संरक्षण संस्था ने नीम अर्क को लीफ माइनर के रोकथाम हेतु स्वीकृत किया है।

तंबाकू, मूँगफली, कपास तथा मीठे आलू के कुछ प्रमुख नाशी कीट जैसे तंबाकू की इल्ली, तंबाकू का कटवर्म, अन्य फसलों के फलीछेदक इत्यादि की रोकथाम नीम अर्क द्वारा इन कीटों के आहार व प्रजनन प्रक्रिया में व्यवधान उत्पन्न कर की जाती है।

नीम उत्पाद अनेक प्रकार की इल्लियों तथा मच्छरों के प्रबंधन में भी सहायक है। नीम उत्पादों के प्रयोग से इन कीटों की आहार प्रक्रिया प्रभावित होती है जिससे वे अपना भोजन नहीं ले पाते हैं और भूख से मर जाते हैं। अनेक विकसित देश मच्छरों की रोकथाम में मंहगे रसायनिक कीटनाशकों को प्रयोग कर रहे हैं, नीम उत्पादों के प्रयोग से कम खर्च में भी अच्छे परिणाम प्राप्त किये जा सकते हैं तथा मच्छरों का प्रभावी प्रबंधन किया जा सकता है।

अनेक प्रयोगों से ज्ञात हुआ है कि नीम उत्पाद फल मक्खियों का भी भली-भाँति प्रबंधन करने में सक्षम हैं। मैड मक्खी जो कि अनेक बागवानी पौधों का प्रमुख नाशी कीट है की रोकथाम भी इन पौधों या वृक्षों के नीचे नीम अर्क का छिड़काव/स्प्रे कर की जा सकती है।

रसायनिक कीटनाशकों के मुकाबले नीम उपयोग के अनेक फायदे हैं। पारंपरिक कीटनाशकों के प्रयोग से जहाँ न केवल नाशी कीटों का संहार होता है वहीं अनेक मित्र कीट भी उसकी चपेट में आकर समाप्त हो जाते हैं परंतु नीम उत्पाद केवल नाशी कीटों पर प्रहार करते हैं और मित्र कीटों के लिए पूर्णतः सुरक्षित है जिसके कारण प्राकृतिक संतुलन बना रहता है।

उत्तरी अमेरिका के जंगलों में पाये जाने वाले जिप्सी कीट जो कि जंगल वृक्षों का भक्षी कीट है के रोकथाम में भी नीम प्रभावी पाया गया है। अमेरिकी पर्यावरण संरक्षण संस्था द्वारा प्रयोगशाला में किये गये अनेक प्रयोगों से यह सिद्ध हुआ है कि नीम बीज अर्क घोल की अल्प मात्रा से जिप्सी मोथ का प्रबंधन हो सकता है। जैसा कि ऊपर बताया जा चुका है कि नीम उत्पाद लगभग ४००-५०० नाशी कीटों के नियंत्रण में सहायक हैं परंतु अभी तक केवल कुछ ही नाशी कीटों पर नीम के प्रभाव का विस्तृत अध्ययन किया गया है तथा यह पाया गया है कि नीम उत्पाद लगभग सभी नाशीकीटों के प्रबंधन में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं।

**नीम अर्क बनाने की विधि**

नीम में पाये जाने वाले अनेक प्रकार के कीट रोधी तत्वों के कारण पिछले कुछ दशकों से नीम व नीम उत्पादों की ओर वैज्ञानिकों का आकर्षण बढ़ा है तथा परीक्षणों के पश्चात् फसल उत्पादन व अन्न भंडारण में नीम की उपयोगिता को स्वीकार किया जा रहा है। नीम अर्क व नीम घोल बनाने की कुछ आसान विधियों का वर्णन यहाँ दिया जा रहा है। नीम के विभिन्न भागों से सर्वाधिक मात्रा में कड़वे व प्रभावी तत्व बीजों में पाये जाते हैं। नीम बीजों से प्राप्त लिम्नोइड प्रकृति के अंश कीट प्रबंधन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। अतः उचित गुणवत्ता वाला अर्क प्राप्त करने हेतु यह आवश्यक है कि नीम बीज भी उच्च गुणवत्ता वाले हों तथा उनका चयन व गूदा हटाने का कार्य भी वैज्ञानिक ढंग से किया जाये।

## नीम बीज संग्रहण व गूदा निकालना

### नीम बीज संग्रहण

नीम फलों या निंबोली के संग्रहण हेतु यदि संभव हो तो नीम वृक्ष के नीचे कपड़े या प्लास्टिक की चादर बिछा देनी चाहिए। इससे निंबोली मिट्टी के संपर्क में नहीं आयेगी, संग्रह में मिट्टी संदूषण नहीं होगा और उनके संग्रहण में आसानी होगी। पूर्ण रूप से पकी हुई पीले रंग की निंबोली का ही बीज निकालने हेतु चयन किया जाना चाहिये। निंबोली गूदे में चूंकि कार्बोहाइड्रेट की मात्रा काफी होती है अतः मिट्टी के संपर्क में आने पर फफूंदी गलन की संभावना बहुत अधिक होती है। फफूंदी संक्रमण से न केवल फफूंदी जहर की उत्पति होगी बल्कि उत्पाद की गुणवत्ता में भी कमी आयेगी अतः यह अति आवश्यक है कि निंबोलियाँ मिट्टी के संपर्क में न आयें। वर्षा ऋतु में अत्याधिक नमी के कारण भी फफूंदी संक्रमण की संभावना बढ़ जाती है अतः नम वातावरण परिस्थितियों में निबोंली बीजों को शीघ्रातिशीघ्र गूदारहित करना आवश्यक है। ताजा इक्कट्ठी की गई निंबोलियों को प्लास्टिक की बोरियों में न भरें। जहां तक संभव हो उन्हें खुली हवादार टोकरियों या जूट की बोरियों में भरकर रखना चाहिए।

**कुछ प्रमुख नाशी कीटों पर नीम का प्रभाव**

| नाशी कीट | प्रभावी प्रक्रिया |
|---|---|
| रेगिस्तानी टिड्डी | २.५ लीटर प्रति हैक्टेयर की दर से नीम तेल के प्रयोग से टिड्डी शावक तितर-बितर हो जाते हैं। समूह से अलग होने व नीम तेल के प्रभाव से वे सुस्त हो जाते हैं तथा हिल-डुल नहीं पाते हैं। इस अवस्था में वे आसानी से चिड़ियों व अन्य कीटभक्षी मित्र कीटों के शिकार बन जाते हैं। |
| काकरोच | नीम बीज अर्क से काकरोच शावक मर जाते हैं तथा वयस्क मादा काकरोच अंडे नहीं दे पाती हैं। |
| हरी पत्ती फुदके | भोजन ग्रहण में व्यवधान उत्पन्न हो जाता है। |
| भूरे भुदके | नीम बीज अर्क से कीटों की जीवन क्षमता घट जाती है। शावकों का वयस्क में विकास अवरूद्ध होता है। प्रजनन प्रक्रिया में बाधा नपुसंकता तथा प्रतिकर्षी प्रभाव के कारण भी इन कीटों की बढ़वार रूक जाती है। |
| मच्छर | तालाबों व पानी के गढ्ढों में कुचले हुए नीम बीज डालने से मच्छरों का जीवन चक्र बाधित होता है। नीम अर्क से मच्छर अंडे नहीं देते हैं और लार्वा का विकास रूक जाता है। |
| मैक्सिकन बीन बीटल | बढ़वार में व्यवधान, भोजन ग्रहण प्रक्रिया में व्यवधान तथा चोला बदल प्रक्रिया में रूकावट |
| खापरा बीटल | बढ़वार व चोला बदल प्रक्रिया में व्यवधान कर तथा लार्वा पर जहरीला प्रभाव |
| बीन एफिड | प्रजनन व चोला बदल प्रक्रिया में व्यवधान कर |
| डायमंड ब्लैक मोथ | लार्वा तथा प्यूपा अवस्था की रोकथाम, वयस्क की बढ़वार रोकना तथा भोजन ग्रहण प्रक्रिया में व्यवधान कर |
| गुलाबी बोल वर्म | भोजन ग्रहण प्रक्रिया में व्यवधान तथा बढ़वार रोकना |
| आर्मी वर्म | बढ़वार में व्यवधान, वयस्कों पर जहरीला प्रभाव, भोजन ग्रहण प्रक्रिया में व्यवधान, चोला बदल में रूकावट तथा लार्वा पर जहरीला प्रभाव |
| मीठी बग | प्रतिकर्षी तथा भोजन ग्रहण प्रक्रिया में व्यवधान |
| धान, चौला इत्यादि का वीविल | भोजन ग्रहण प्रक्रिया में व्यवधान, बढ़वार में रूकावट तथा जहरीला तत्व |
| पत्ता गोभी लूपर | भोजन ग्रहण प्रक्रिया में व्यवधान |
| धान की गॉल मिज | जहरीला |
| जिप्सी मोथ | बढ़वार में रूकावट, भोजन ग्रहण प्रक्रिया में व्यवधान तथा चोला बदल प्रक्रिया में बाधा उत्पन्न कर |

| | |
|---|---|
| पत्ती माइनर | भोजन ग्रहण प्रक्रिया, चोला बदल प्रक्रिया तथा बढ़वार में व्यवधान कर तथा जहरीला प्रभाव |
| अग्नि चींटी | बढ़वार व भोजन प्रक्रिया में व्यवधान कर |
| फल मक्खी | प्रतिकर्षी (१०० प्रतिशत प्रबंधन संभव) |
| सूत्रकृमि | नीम खली के प्रयोग से अंडे से वयस्क नहीं बन पायेंगे तथा शावकों की द्वितीय बढ़वार प्रक्रिया में रूकावट |
| सफेद मक्खी | प्रतिकर्षी, बढ़वार व भोजन प्रक्रिया में व्यवधान कर |
| ज्वार की तना मक्खी | भोजन ग्रहण प्रक्रिया अवरूद्ध कर |
| खीरा का धब्बेदार बीटल | बढ़वार व भोजन ग्रहण प्रक्रिया अवरूद्ध कर |

### निंबोली से गूदा अलग करना

इस प्रक्रिया में निंबोली का बाहृय आवरण, गूदा तथा बीज खोल अलग कर बीजों को निकाला जाता है। यह प्रक्रिया हाथों द्वारा या उपयुक्त यंत्रों द्वारा की जा सकती है। निंबोलियों को साफ पानी से भरी बाल्टी में डालकर हाथों से तब तक मसला जाता है जब तक कि गूदा व छिलका बीजों से अलग न हो जायें। पूरी तरह साफ बीजों को साफ पानी में धोकर छाया में सुखा लिया जाता है। बीजों को ढ़ेर रूप में इक्कट्ठा नहीं करना चाहिए तथा भंडारण हेतु हवादार टोकरियों या जूट की बोरियों में भरकर नमी रहित वातावरण में ठंडे स्थान पर रखना चाहिए। प्लास्टिक की बोरियों का प्रयोग नहीं करना चाहिए इससे बीजों की गुणवत्ता खराब हो जाती है। अच्छी प्रकार साफ कर सुखाये गये बीजों को ६-१२ महीने तक भंडारित किया जा सकता है। साधारणतया बीज अर्क या तेल निकालने हेतु तीन से ८ महीने पुराने बीज सर्वाधिक उपयुक्त होते हैं। प्रभावी तत्वों (लिमोनोइडस) की सर्वाधिक मात्रा इसी अवस्था में पायी जाती है।

### नीम बीज जलीय अर्क

- प्रयोग से पूर्व खरल में कूटकर या यंत्र की मदृद से बीज आवरण को अलग करें तथा छाज या हवा की मदृद से आवरण रहित बीजों को अलग करें।
- एक किलो बीजों को धीरे-धीरे कूटकर चूर्ण बनायें, ध्यान रहे कूटते समय तेल न निकलने पाये। इस चूर्ण को १० लीटर साफ पानी में मिलायें। इस घोल में १० मि.ली. एडजूवेंट डालकर अच्छी तरह मिलायें। अच्छे परिणाम हेतु थोड़ा सा रीठा फल चूर्ण (या साबुन घोल) भी इस घोल में मिलाया जा सकता है। इस घोल को रात भर के लिए छोड़ दें और अगले दिन एक कपड़े से छान लें। बचे हुए पदार्थ में फिर से पानी डालकर उपरोक्तानुसार २-३ बार निष्कर्षण करें। अंत में बचे हुए पदार्थ/चूर्ण को खाद के रूप में मिट्टी में प्रयोग करें।

#### नीम बीज अर्क का छिड़काव

अधिकांश फसलों में १.२५ प्रतिशत से ५ प्रतिशत (नीम बीज भार के आधार पर) नीम बीज अर्क को स्प्रे रूप में प्रयोग किया जाता है। रोकथाम की अवस्था में कम सांद्रता १.२५ से २.५ प्रतिशत तथा उपचार की अवस्था में अधिक सांद्रता वाले अर्क (५ प्रतिशत) का स्प्रे किया जाना चाहिए। उसी दिन प्राप्त ताजा अर्क सर्वाधिक प्रभावी होता है। अच्छे परिणाम हेतु स्प्रे कम धूप में शाम के समय किया जाना चाहिए। एक बार स्प्रे करने पर अर्क का प्रभाव ७-१० दिन तक बना रहता है। स्प्रे करते समय ध्यान रखें कि प्रत्येक पौधा अर्क घोल से पूरी तरह तर हो जाये।

#### नीम पत्ती अर्क

एक हैक्टेयर क्षेत्र के लिए लगभग ८० किलो नीम की पत्तियों से अर्क बनाया जाता है। एक किलो नीम की पत्तियों को लगभग ५ लीटर पानी में कुचलें तथा रात भर के लिए भीगने दें। अगले दिन कपड़े से छानकर अर्क का प्रयोग करें। पत्ती अर्क पत्तियाँ खाने वाली इल्लियों, ग्रब, टिड्डियां तथा धान के फुदकों की रोकथाम में प्रभावी है। अधिक प्रभावी बनाने के लिए अर्क में थोड़ा सा एडजूवेंट तथा रीठा फल चूर्ण भी मिलाया जा सकता है।

### नीम खली अर्क

१०० ग्राम खली को एक कपड़े में बाँधकर एक लीटर पानी में लटका दें तथा रात भर के लिए छोड़ दें। अगले दिन पानी में थोड़ा एडजूवेंट (१ मि.ली./लीटर) मिला कर स्प्रे करें।

### नीम तेल स्प्रे

१५-३० मि.ली. नीम तेल तथा १ मि.ली. एडजूवेंट एक लीटर पानी में मिलाकर अच्छी प्रकार घोल बना लें तथा नैपसैक स्प्रेयर से स्प्रे करें।

### नीम उत्पादों के प्रयोग हेतु सावधानियाँ

स्प्रे कम धूप में या तो प्रातःकाल या सायंकाल में करना चाहिए। नाशी कीट साधारणतया पत्तियों के निचले भाग पर अंडे देते हैं अतः यह सुनिश्चित करें कि सभी पतित्यों के निचले भाग पर स्प्रे अवश्य हो।

नीम के प्रभावी तत्व जिन कारकों से नष्ट होते हैं उनमें प्रमुख हैं:

- अर्क को गर्म करना या उबालना - अतः अर्क को गर्म न करें।
- एडजूवेंट या इमलसिफायर का अम्लीय या क्षारीय होना - ध्यान रहे एडजूवेंट का पी एच मान लगभग ७ होना चाहिए।
- पराबैगनी किरणें - स्प्रे कम धूप में प्रातः या सायंकाल में करें।
- जलीय अपघटन - अर्क को उसी दिन प्रयोग करें पुराना अर्क प्रभावी नहीं होता है।

### गैर कीट नाशी जीव प्रबंधन में नीम का प्रयोग

अनुसंधानों द्वारा यह सिद्ध हो चुका है कि नीम गैर कीट नाशीजीव प्रबंधन में भी प्रभावी है। सूत्रकृमि (Nematodes) कृषि के प्रमुख नाशी जीव हैं तथा इनका नियंत्रण बहुत कठिन है। रसायनिक सूत्र कृमि नाशक अत्यधिक जहरीले होते हैं अतः उनका प्रयोग नहीं किया जाता है। परंतु ये जीव नीम उत्पादों से आसानी से नियंत्रित किये जा सकते हैं। नीम में उपस्थित कुछ लिमोनोइड तत्व सूत्रकृमियों से सुरक्षा प्रदान करते हैं। नीम खली का सीधे मिट्टी में प्रयोग या नीम बीज जलीय अर्क के प्रयोग से सूत्रकृमि प्रबंधन किया जा सकता है।

### नाशीजीव फफूंदी नियंत्रण

पौधे, वृक्ष तथा फसलें फफूंदी जनित बीमारियों से प्रभावित होते हैं। प्रमुख फसलों जैसे गेहूँ, धान, मक्का इत्यादि में फफूंदी जनित बीमारियों से काफी हानि होती है। नीम खली के प्रयोग से अनेक प्रकार की फफूंदियों की रोकथाम की जा सकती है। प्रयोग में नीम उत्पादों द्वारा बीमारी रोकथाम सबसे कम खर्चीली प्रक्रिया है। एस्परजिलस फ्लेवस फफूंदी जो खाद्य पदार्थों में एफलाटोक्सिन बनाती है को यद्यपि नीम द्वारा नष्ट तो नहीं किया जा सकता है परंतु नीम के उपयोग से फफूंदी की एफलाटोक्सिन निर्माण क्षमता निष्क्रिय हो जाती है।

### नीम भंडारण-कीट प्रबंधन में

भारत में नीम का अनाज भंडारण में प्राचीन काल से ही प्रयोग किया जाता रहा है। किसान अनाज का भंडारण करते समय बीच-बीच में नीम पत्तियों की परत बनाते जाते हैं जिससे लगभग ८-१० महीने तक अनाज को सुरक्षित रखा जा सकता है। नीम की पत्तियाँ, अर्क तथा तेल का भी भंडारण-कीटों जैसे वीविल, आटा बीटल, बीनसीड बीटल तथा आलू मोथ की रोकथाम में प्रयोग किया जाता है। नीम के प्रयोग से अधिकांश भंडारण कीटों के अंडों को निष्क्रिय किया जा सकता है। भंडारण बोरियों, भंडार गृह के फर्श, दीवारों व छतों पर नीम तेल के लेप से भंडारण कीटों को पनपने से रोका जा सकता है।

अधिकांश मामलों में यद्यपि नीम, रसायन प्रयोग का विकल्प नहीं है परंतु नीम के प्रयोग से वातावरण को प्रदूषित किये बिना बहुत कम खर्च में नाशी जीव प्रबंधन किया जा सकता है तथा जहरीले रसायनों के प्रयोग को घटाया जा सकता है।

# मृदा उर्वरण तथा नाशी जीव प्रबंधन के कुछ नवीन सूत्र व विधियाँ

(ये सभी सूत्र देश के किसानों या सामाजिक गैर सरकारी संस्थाओं द्वारा विकसित किये गये हैं और किसानों के बीच प्रचलित हैं। इन सूत्रों का अभी तक कोई वैज्ञानिक आधार नहीं है परंतु उनकी सत्यता व प्रभाविता निर्विवाद हैं)

**मृदा उर्वरण तथा वृद्धिकारक सूत्र**

**संजीवक**

इस उत्पाद के प्रयोग से मिट्‌टी में लाभदायी सूक्ष्म जीवों की पुर्नस्थापना तथा बढ़वार से मिट्‌टी की उत्पादन क्षमता में सुधार होता है तथा फसल अवशेषों व जैविक अवशेषों का शीघ्र अपघटन सुनिश्चित होता है।

- ५०० लीटर क्षमता की एक टंकी में १००-२०० किलो गोबर, १०० किलो पशु मूत्र तथा ५०० ग्राम गुड़ को ३०० लीटर पानी में अच्छी प्रकार घोलें तथा टंकी को ढक दें।
- लगभग ६-७ दिन तक इस घोल को सड़ने दें।
- एक एकड़ हेतु २०० लीटर घोल में लगभग २० गुणा पानी मिलाकर खेत में समान रूप से छिड़क दें या सिंचाई जल के साथ मिलाकर पूरे खेत में फैला दें।
- इस घोल को प्रत्येक फसल में लगभग २-३ बार प्रयोग करें। प्रथम बार बुवाई से पहले दूसरी बार बुवाई के २० दिन बाद तथा तीसरी बार बुवाई के ४५ दिन बाद।

**जीवामृत**

- २०० लीटर क्षमता के ड्रम या टंकी में १० किलो गोबर, १० ली. पशु मूत्र २ किलो गुड़ तथा २ किलो बेसन को २०० लीटर पानी में मिलायें और ५-७ दिन तक सड़ने दें।
- अच्छे परिणाम हेतु पीपल/बरगद या गूलर के पेड़ के नीचे की लगभग २-५ किलो मिट्‌टी भी इस घोल में मिला दें।
- अच्छी तरह सड़ जाने पर उपरोक्तानुसार मिट्‌टी में २-३ बार प्रयोग करें एक एकड़ हेतु लगभग २०० लीटर जीवामृत घोल की आवष्यकता होती है।

**अमृत पानी**

- १० किलो गोबर को ५०० ग्राम शहद के साथ अच्छी तरह फेंटे।
- अब इसमें २५० ग्राम घी डालकर फेंटें और २०० लीटर पानी में घोलें।
- यह घोल एक एकड़ के लिये पर्याप्त है।
- सिंचाई जल के साथ पूरे खेत में फैला दें या स्प्रेयर द्वारा भूमि सतह पर स्प्रे कर फैला दें। पहली बार बुवाई से पहले तथा दूसरी बार बुवाई के ३० दिन बाद प्रयोग करें।

**सान्द्र जैविक खाद**

अच्छी तरह सड़ाये हुए सान्द्र जैविक खाद जापान में बहुत प्रचलित हैं और प्रमुखतया कमजोर मिट्टी में या ऐसे खेतों में जहाँ रासायनिक खेती छोडकर जैविक खेती की शुरूआत की जा रही है, में प्रयोग किये जाते हैं ।

आवश्यकताएँ

| | |
|---|---|
| • धान या गेंहू का बूर | १० भाग |
| • मछली खाद | १ भाग |
| • खली | १ भाग |
| • अण्डों के छिलके | कुल भार का १ प्रतिशत |
| • रॉक फास्फेट | कुल भार का १.५ प्रतिशत |
| • लपटी (मोलेसिस) | थोडी सी |
| • जंगल की मिट्टी (जीवाणुओं के लिये) या जीवाणु घोल (इ.एम.) | |

मछली खाद के स्थान पर हड्डी खाद, लहू खाद या कसाई घर से प्राप्त जन्तु अवशेष इत्यादि भी प्रयोग किये जा सकते है। जीवाणुओं की उपलब्धता सुनिश्चित करने के लिये १०-१२ प्रकार के सडन जीवाणुओं का मिश्रण (इ.एम.) भी प्रयोग किया जा सकता है। आधे सडे कम्पोस्ट में खट्टा दही व खट्टा नारियल दूध मिलाकर भी प्रयोग किया जा सकता है।

प्रक्रिया

- लपटी को छोडकर अन्य सभी अवयवों को अच्छी प्रकार मिला लें।
- लपटी को १:५०० के अनुपात में पानी में मिलाकर उक्त मिश्रण में इस प्रकार मिलायें कि मिश्रण में लगभग ५०-५५ प्रतिशत नमी हो जाये।
- इस मिश्रण को ढ़ेर बनाकर किसी पोलीथीन की चादर से ढ़क दें या किसी बडे बर्तन में भरकर ढ़क दें।
- २४ घंटे बाद उलट पलट कर मिलाये।
- अगले ४-५ दिन तक प्रतिदिन दो बार उलट पलट कर मिलाते रहें।
- मिश्रण का तापमान ४०-४५° से. के आसपास रहना चाहिये।
- ४-५ दिन में सांद्र जैविक खाद तैयार हो जायेगी।

तैयार होने पर खाद में किसी भी प्रकार की बदबू नहीं होनी चाहिये। यदि बदबू आती है तो इसका मतलब यह है कि सड़न प्रक्रिया ठीक से नहीं हुई है। ऐसी स्थिति में अगले दो दिन तक प्रति दिन ३ बार उलट पलट कर मिलायें। यदि बदबू फिर भी न जाये तो जीवाणुओं का ताजा घोल मिलाकर अगले २-३ दिन तक रोज ३ बार पलटी करें। बदबू समाप्त हो जायेगी और अच्छी गंध वाली खाद तैयार हो जायेगी।

सान्द्र मुर्गी खाद

मुर्गियों की सूखी बीट, खली, कुछ ताजा राख एवं रॉक फास्फेट को १०:१०:२:२ के अनुपात में मिलाकर पीस लें। उत्कृष्ट सान्द्र खाद तैयार है। फसल एवं मिट्टी की आवश्यकतानुसार विभिन्न अवयवों के अनुपात में फेर बदल किया जा सकता है। अम्लीय मिट्टी के लिये इस मिश्रण में चूने का भी प्रयोग किया जा सकता है।

गोमूत्र

गोमूत्र एक उत्कृष्ट द्रवीय खाद है तथा सीधे ही फसलों पर स्प्रे रुप में प्रयोग किया जा सकता है। एक लीटर गोमूत्र को २० लीटर पानी में मिलाकर आधे एकड फसल पर स्प्रे करें। इस घोल का प्रयोग किसी भी फसल में और फसल की किसी भी अवस्था में किया जा सकता है।

वर्मीवाश एक उत्तम वृद्धिकारक

वर्मीवाश अकेले या गोमूत्र के साथ उत्तम वृद्धिकारक है। एक लीटर वर्मीवाश या आधा लीटर वर्मीवाश व आधा लीटर गोमूत्र १५ लीटर पानी में मिलाकर फसल पर छिड़काव करें प्रत्येक फसल में आवश्यकतानुसार ३ से ४ बार छिड़काव करें।

बीज उपचार सूत्र

बीजामृत

५ किलो गोबर, ५ लीटर गोमूत्र, १ लीटर गौ दूध तथा २५० ग्राम चूने को १०० लीटर पानी के साथ मिलायें तथा रात भर के लिए छोड़ दें। अगले दिन छानकर प्राप्त द्रव से बीजोपचार करें। उपचारित बीजों को छाया में सुखाकर बुवाई करें।

पौध संरक्षण सूत्र

दषपर्णी संरक्षण अर्क

निम्न पौध अवयवों को एक ५०० लीटर क्षमता के ड्रम या टंकी में डालकर कुचलें

- नीम पत्तियॉं - ५ किलो
- र्निगुण्डी पत्तियॉं - २ किलो
- एरिस्टोलोचिया पत्तियॉं - २ किलो
- पपीता पत्तियॉं - २ किलो
- टीनोस्पोरा कॉर्डिफोलिया पत्तियॉं - २ किलो
- शरीफा (Custerd apple) पत्तियॉं - २ किलो
- करंज पत्तियॉं - २ किलो
- अरंडी की पत्तियॉं - २ किलो
- कनेर की पत्तियॉं - २ किलो
- आक/धतूरे की पत्तियॉं - २ किलो
- हरी मिर्च की लुगदी - २ किलो
- लहसुन की लुगदी - २५० ग्राम
- गोबर - २ किलो
- गोमूत्र - ५ लीटर
- पानी - २०० लीटर

लगभग एक माह तक इस घोल को सड़ने दें। ड्रम को छाया में ढ़क कर रखें और प्रतिदिन ३-४ बार हिलायें। एक माह पश्चात् अच्छी तरह घोंट कर छान लें। २०० लीटर अर्क १ एकड़ के लिए पर्याप्त है और छनाई के पचात् ६ माह तक भंडारित किया जा सकता है।

पंचगब्य

- गोबर घोल ४ किलो
- ताजा गोबर १ किलो
- गोमूत्र ३ ली.
- गाय का दूध २ ली.
- दही २ ली. तथा
- गाय का घी १ किलो

उपरोक्त सभी पदार्थों को मिलाकर द्रावण बनायें और ७ दिन तक सड़ने दें प्रतिदिन २ बार हिलायें। छानकर स्प्रे रूप में प्रयोग करें। ३ लीटर पंचगब्य को १०० लीटर पानी में मिलाकर प्रयोग करें। एक एकड़ हेतु लगभग २० लीटर पंचगब्य की

आवश्यकता होगी। भूमि उपचार हेतु सिंचाई जल में मिलाकर प्रयोग करें या भूमि पर स्प्रे/छिड़काव करें पंचगव्य को बीज उपचार हेतु भी प्रयोग किया जा सकता है। बीजों को २० मिनट तक पंचगव्य में डुबोकर रखें तथा सुखाकर बुवाई करें।

**संवर्धित पंचगव्य (दशगव्य)**

- ताजा गाय का गोबर — १ किलो
- गोमूत्र — ३ ली.
- गाय का दूध — २ ली.
- दही — २ ली.
- गाय का घी — १ किलो
- गन्ने का रस — ३ ली.
- नारियल पानी — ३ ली.
- केले की लुगदी — १२ केले की

सभी अवयवों को १०० लीटर पानी में मिलाकर ७ दिन तक सड़ायें तथा पंचगव्य के अनुरूप प्रयोग करें।

**कुछ अन्य वानस्पतिक नाशीकीट नाशक सूत्र**

नीमास्त्र

- ५ किलो नीम पत्तियों को पानी में कुचलें
- इसमें ५ लीटर गोमूत्र व २ किलो गोबर मिलायें
- २४ घंटे तक रखें तथा बीच-बीच में हिलाते रहें।
- छानकर द्रावण प्राप्त करें और १०० लीटर जल मिलाकर एक एकड़ क्षेत्र पर पर्ण स्प्रे के रूप में प्रयोग करें।
- यह सूत्र रस चूसने वाले कीटों तथा मीली बग प्रबंधन में प्रभावी है।

ब्रह्मास्त्र

- तीन किलो नीम पत्तियों को ३ ली. गो मूत्र में कुचलें।
- एक अलग पात्र में २ किलो शरीफा की पत्तियाँ, २ किलो पपीता पत्तियाँ, २ किलो अनार पत्तियाँ तथा २ किलो अमरूद पत्तियाँ पानी में कुचलें।
- उपरोक्त दोनो घोलों को मिलाकर ५-६ बार तब तक उबालें जब तक कि कुल घोल आधा न हो जाये।
- २४ घंटे तक ठंडा होने दें और अच्छी तरह घोंटकर छान लें।
- इस छने हुए घोल को ६ माह तक भंडारित किया जा सकता है।
- २ से २.५ लीटर द्रावण को १०० लीटर पानी में मिलाकर एक एकड़ क्षेत्र में स्प्रे करें।
- ब्रह्मास्त्र रस चूसने वाले कीटों, फली व फल छेदकों इत्यादि की रोकथाम में सहायक है।

आग्नेयास्त्र

- एक किलो बेशरम(Ipomea) के पत्ते, ५०० ग्राम हरी मिर्च, ५०० ग्राम लहसुन तथा ५ किलो नीम की पत्तियाँ १० ली. गो मूत्र में कुचलें।
- उपरोक्त घोल को तब तक उबालें जब तक कि वह आधा न रह जाये।
- ठंडा कर छाने और कॉच या प्लास्टिक की बोतल में भंडारित करें।

- यह द्रावण तना/फल एवं फली छेदक, लीफ रोलर इत्यादि के प्रबंधन में सहायक है।
- २-३ लीटर को १०० ली. पानी में घोलकर एक एकड़ फसल पर स्प्रे करें।

सूत्र-१

- किसी ताँबे के बर्तन में ३ किलो कुचली हुई नीम की पत्तियाँ, एक किलो निम्बोली चूर्ण लगभग १० लीटर गोमूत्र में मिलायें और सील कर रख दें।
- १० दिन पश्चात् इस घोल को तब तक उबालें जब तक कि यह आधा न रह जाये।
- एक दूसरे बर्तन में ५०० ग्राम तीखी हरी मिर्च को एक लीटर पानी में कुचलें और रात भर के लिए छोड़ दें।
- एक तीसरे बर्तन में २५० ग्राम लहसुन को एक लीटर पानी में कुचलें और रात भर के लिये छोड़ दें।
- अगले दिन तीनों घोलों को मिलाकर (उबला गोमूत्र घोल, मिर्च घोल व लहसुन घोल) छान लें।
- उम्दा कीटनाशी तैयार है। इसका प्रयोग लगभग सभी प्रकार की फसलों में अनेक प्रकार के कीटों को नियंत्रित करने में किया जा सकता है।

सूत्र-२

- एक २०० लीटर के ड्रम में ५ किलो निम्बोली चूर्ण, १ किलो करंज बीज चूर्ण, ५ किलो बेशरम की पत्तियाँ तथा ५ किलो नीम की पत्तियों को कुछ पानी में कुचलें।
- इसमें १०-१२ लीटर गोमूत्र मिलायें और ड्रम को ऊपर तक पानी से भर दें।
- ड्रम को ढक्कन लगाकर बंद कर दें और ८-१० दिन तक सड़नें दें।
- ८ दिन पश्चात् इस घोल का आसवन करें और आसवित द्रव को इकट्ठा करें।
- यह आसवित द्रव न केवल अच्छा कीटनाशी है वरन् इसके उपयोग से पौधों की बढ़वार भी अच्छी होती है। एक ड्रम से प्राप्त आसवित द्रव एक एकड़ के लिये पर्याप्त है। इसे ३००-४०० लीटर पानी में मिलाकर एक एकड़ में स्प्रे करें।
- इस कीटनाशी को कुछ महीनों तक भंडारित किया जा सकता है।

**हल्दी में सूत्रकृमि रोकथाम हेतु (तमिलनाडु के श्री चेलामुथु की खोज)**

- २५० ग्राम अदरक, २५० ग्राम हरी मिर्च, १ किलो निंगुण्डी की पत्तियाँ, ५०० ग्राम लहसुन, ५०० ग्राम एलोवेरा की पत्तियाँ, १ किलो निंबोली बीज तथा १ किलो क्लिओडैन्ड्रोन की पत्तियाँ
- सभी उपरोक्त आदानों को मिलाकर कुचलें और लुगदी बना लें तथा १५० लीटर पानी में घोलें कुछ समय बाद छान लें।
- बुवाई के लगभग १२० दिन बाद मिट्टी उपचार के रूप में एक एकड़ क्षेत्र में प्रयोग करें।

**धान में कीट नियंत्रण (श्री चेलामुथु की खोज)**

- निर्गुण्डी की पत्तियाँ १ किलो, क्लिओडैन्ड्रोन की पत्तियाँ १ किलो, एलोवेरा की पत्तियाँ १ किलो तथा नीम बीज १ किलो को १०० ली. पानी में कुचलें।
- छानकर एक एकड़ धान पर स्प्रे करें।

**कपास, अरंडी तथा हरी पत्ती सब्जियों के रस चूसने वाले कीट नियंत्रण हेतु (गुजरात के श्री रजनीकांत भाई पटेल की खोज)**

- ३ किलो काली वेल्दी (एक क्रोटोन) पत्तियों को २० ली. पानी में कुचलें और तब तक उबालें जब तक कि घोल आधा न रह जाये।
- ठंडा होने पर छान लें तथा १०० ली. जल में मिलाकर १०-१० दिन के अंतर पर चार बार स्प्रे करें।

**प्रोडेन्शिया तथा हीलियोथिस इल्ली नियंत्रण (रजनीकांत भाई पटेल की खोज)**

- ४ किलो एलोवेरा, ५०० मि.ली. नीम तेल तथा ५०० मि.ली. तम्बाकू का काढ़ा को १० ली. पानी में मिलाकर आधा रह जाने तक उबालें।
- ठंडा कर छान लें और १५ लीटर पानी में १००-१५० मि.ली. उपरोक्त अर्क मिलाकर स्प्रे रूप में प्रयोग करें।
- १० दिन के अंतर पर ३ से चार बार स्प्रे करें।

**आर्मी वर्म, एफिड, कपास का सेमीलूपर, हरी पत्ती फुदका, माइटस, पाउडरी मिल्डयू, दलहन का बीटल तथा धान वीविल की रोकथाम हेतु**

- १ किलो हल्दी, ४ ली. गोमूत्र को २० लीटर पानी में मिलायें तथा छानकर स्प्रे रूप में प्रयोग करें।

**अमरीकन बोलवर्म, एफिड, दलहन का बीटल तथा सफेद मक्खी नियंत्रण हेतु**

- २ किलो अदरक लुगदी

**अदरक, लहसुन व मिर्च का कीटनाशी**

- ५०० ग्राम लहसुन १०० मि.ली. कैरोसीन में कुचलें।
- १०० ग्राम हरी मिर्च ५० मि.ली. पानी में कुचलकर लुगदी बनायें तथा इसमें १०० ग्राम अदरक कुचलकर मिला दें।
- उपरोक्त सभी अवयवों को २-३ मि.ली. एडजूवेंट या इमल्सीफायर के साथ ३० लीटर पानी में मिलायें तथा अच्छी प्रकार घोट कर छान लें।
- एक एकड़ में १०० ली. पानी के साथ स्प्रे करें।

**एफिड व बीटल नियंत्रण**

शरीफा (Custard apple) के बीजों का चूर्ण एक उत्तम कीट नाशी हैं। नीम के अनुरूप इसमें कीटों की भोजन ग्रहण प्रक्रिया को बाधित करने की क्षमता है। मक्खियों, एफिड तथा अनेक प्रकार के बीटल पर यह जहर का कार्य करता है।

- २ ली. पानी में ५०० ग्राम बीज चूर्ण मिलाकर तब तक उबालें जब तक कि घोल ५०० मि.ली. रह जाये। ठंडा कर १५ लीटर पानी में मिलायें और छानकर स्प्रे रूप में प्रयोग करें।
- २ किलो शरीफा की पत्तियों का रस ५०० मि.ली. पानी में मिलायें।
- एक अलग पात्र में ५०० ग्राम हरी मिर्च कुचलें।
- एक और पात्र में १ किलो नीम बीज का अर्क बनायें
- तीनो मिश्रण को मिलाकर छान लें तथा ६० ली. पानी में मिलाकर स्प्रे रूप में प्रयोग करें।

## कुछ अन्य वानस्पतिक नाशीजीव नियंत्रण व पौध बढ़वार उत्प्रेरक सूत्र

### फफूँदी बीमारी नियंत्रण हेतु

- तम्बाकू की नर्सरी में फफूँदी रोकथाम हेतु २-३ किलो राख एक किलो अरंडी तेल में मिलाकर १०० वर्ग मीटर नर्सरी बैड पर फैलायें। ७-१० दिन के अंतर पर दो बार फिर प्रयोग करें
- पाउडरी मिल्ड्यू की रोकथाम हेतु २ किलो हल्दी चूर्ण ८ किलो लकड़ी की राख में मिलाकर पत्तियों पर भुरकें।
- २० ग्राम अदरक चूर्ण को १ लीटर पानी में मिलाकर १५ दिन के अंतर से ३-४ बार स्प्रे करने पर पाउडरी मिल्ड्यू की रोकथाम की जा सकती है।
- टमाटर की जड़ों के आसपास मुठ्ठी भर बुझा हुआ चूना डालने से उकठा रोग की रोकथाम की जा सकती है।
- गाय व बकरी के मूत्र में फफूँदी रोकथाम के गुण हैं। दो कप मूत्र में ५ मि.ली. पिपरमिंट तेल मिलाकर १० लीटर पानी के साथ स्प्रे करने से अंगूर में फफूँदी रोग की रोकथाम की जा सकती है।

### दीमक नियंत्रण

- चूना और गंधक मिश्रण को मिट्टी में मिलाने से दीमक भाग जायेगी
- कॉफी व खजूर के वृक्षों/झाड़ियों के तनों के आसपास राख का ढ़ेर लगाने से दीमक का प्रकोप नहीं होता है।
- दीमक के स्थान पर गोमूत्र व पानी (१:६ के अनुपात में) बार-बार डालने से दीमक भाग जायेगी।
- गोबर तथा लाल मिट्टी से तनों का लेप करने पर दीमक से वचाव होता है।

### सुपली - एक आश्चर्यजनक पौधा

सुपली (Mundulea suberosa) एक आदर्श नाशी जीव नियंत्रक पौधा है। सुपली मध्य व पश्चिमी भारत में पहाड़ी स्थानों पर बहुतायत में पाया जाता है।

- एक किलो हरी पत्तियों को १० लीटर पानी में कुचलें
- मिश्रण को आधा रह जाने तक उबालें
- ठंडा होने पर छानकर १०० लीटर पानी में मिलाकर स्प्रे करें
- यह घोल विभिन्न सब्जी फसलों के पत्ती खाने वाले, रस चूसने वाले तथा तना व फली भेदकों की रोकथाम करता है।

### फ्लाईएश आधारित वानस्पतिक नाशीजीव नाशी

नशीजीव नियंत्रण गुण वाले पौध अवशेषों को चूर्ण बनाकर फ्लाईएश के साथ चूर्णीय नाशीजीव नाशक के रूप में प्रयोग किया जा सकता है। कुछ प्रमुख सूत्र निम्नानुसार हैं

- १० प्रतिशत हल्दी चूर्ण व फ्लाईएश
- १० प्रतिशत नीम बीज चूर्ण व फ्लाईएश
- १० प्रतिशत तुलसी या निर्गुण्डी या यूकेलिप्टस पत्ती चूर्ण व फ्लाईएश
- इन सूत्रों के भुरकाव से अनेक प्रकार के कीटों की रोकथाम की जा सकती है।

### कमाल- फसल बढ़वार उत्प्रेरक तथा नाशीजीव नियंत्रक

भाग क - १० लीटर पानी में नीम, आक धतूरा तथा भाँग की पत्तियों को कुचलकर अर्क निकालें

भाग ख - १० लीटर पानी में तम्बाकू चूर्ण, चिरायता, कुटकी, बवाची, इमली तथा लाल मिर्च कुचल कर अर्क निकालें

दोनो भागों को मिलाकर रीठा पाउडर तथा नीम तेल डालकर छान लें और स्प्रे रूप में प्रयोग करें।

एग्रोकेम - एक वानस्पतिक नाशीजीव नाशी

- ५० ग्राम धतूरा, ५० ग्राम रतनजोत (जाट्रोफा), ५० ग्राम बेशरम (आइपोमिया) ५० ग्राम तम्बाकू तथा ५० ग्राम वकल पत्तियों को ५० ग्राम निंबोली तथा ५० ग्राम नीम की पत्तियों तथा १०० ग्राम कांग्रेस घास के साथ मिलाकर पीस लें।
- एक अलग पात्र में ३ ली. पानी, ५० ग्राम वेवड़ींग (ऐम्बेलिया), १५० मि.ली. कैरोसीन तथा ५ चम्मच निरमा डिटरजेंट पाउडर के साथ उबालें तथा ठंडा होने पर २०० मि.ली. गोमूत्र मिलायें।
- दोनो मिश्रणों को मिलाकर ५ दिन के लिए छोंड़ दें।
- अच्छी प्रकार मिलाकर छान लें
- इस अर्क के १ लीटर को १०० लीटर पानी में मिलाकर स्प्रे करें।
- इस अर्क को लंबे समय तक भंडारित किया जा सकता है तथा यह अनेक प्रकार के कीटों की रोकथाम में प्रभावी है।

**कपास में कीट प्रबंधन हेतु वानस्पतिक कीटनाशी**

- आरनी (Cleodeudrum pholomidis), किदीमारी (Aristolochic bracteata) मामेजावो (Ericostemma littorale) तथा नीम की पत्तितयों को पानी में कुचलें
- कपड़े से छानकर अर्क निकालें
- २०० से ५०० मि.ली. इस अर्क को १५ लीटर पानी में मिलाकर स्प्रे करें। एक बीघा हेतु लगभग ३० लीटर अर्क की आवश्यकता होगी।

**कपास में कीट प्रबंधन हेतु एक अन्य सूत्र**

- ग्वार पाठा (एलो वेरा), करायतु (कैन्सकोरा डिफ्यूसा), कनेर (निरियम इन्डीकम), कडी जीरी (नाइगेला सटाइवा), शरीफा (कस्टर्ड एपल) कोठीमडा (कुक्यूमिस कैलोसस) मामेजीवो (ऐन्कोस्टेमा लिट्टोरेल), नीम की छाल, लाल मिर्च तथा सरागवो (मोरिन्गा ओलिफेरा) को २० ली. पानी में रात भर भीगने दें।
- थोड़ा सा निरमा डिटजेंट पाउडर भी मिलायें तथा अच्छी तरह घोट कर छान लें।
- २०० से २५० मि.ली. अर्क को १५ लीटर पानी में मिलाकर स्प्रे करें।
- कीट प्रकोप के अनुसार इस अर्क का २-३ बार १५ दिन के अंतराल पर स्प्रे करें।

**अरंडी में बाल वाली इल्ली का प्रबंधन**

- ५०० मि.ली. इमली रस में ५०० मि.ली. नींबू रस मिलाकर द्रावण बनायें तथा पानी के साथ स्प्रे करें।
- यह अर्क लगभग आधा एकड़ फसल हेतु पर्याप्त है और इल्ली की पूर्ण रोकथाम में प्रभावी है।

# पंचगव्य - एक उत्कृष्ट जैविक आदान

पंचगव्य गाय के विभिन्न उत्पादों से बना एक ऐसा प्राकृतिक आदान है जिसमें पौधों की बढ़वार सुनिश्चित करने एवं रोग रोधक क्षमता है यह नौ तरह के पदार्थों का मिश्रण है जिसमें गाय का गोबर, गौ मूत्र, दूध, दही, शीरा, घी, केला, कच्चा नारियल एवं जल का प्रयोग होता है। अगर उक्त पदार्थों का सही मिश्रण तैयार किया जाये तो यह एक अद्भुत पादप औषधि का काम करता है। पंचगव्य को तैयार करने के लिए ७ किलो ग्राम गाय के गोबर में एक कि.ग्रा. गाय का घी मिलाकर सुबह और शाम तीन दिन तक अच्छी तरह मिलाकर घोल बनाया जाता है। तीन दिन पश्चात् इसमें १० लीटर गौ मूत्र एवं १० लीटर पानी मिलाकर लगभग १५ दिन तक रोजाना सुबह और शाम अच्छी तरह से हिलाया जाता है। इसके १५ दिन पश्चात् ३ लीटर गाय का दूध, २ लीटर दही, ३ लीटर कच्चे नारियल का पानी, ३ लीटर शीरा एवं एक दर्जन पका हुआ केला अच्छी तरह से मिलाकर घोल तैयार किया जाता है जो लगभग ३० दिन में बनकर तैयार हो जाता है। इसको पंचगव्य कहा जाता है। ऊपर बताये गये सभी पदार्थों को एक चौड़े मुंह वाले मिट्टी के घड़े या सीमेंट से बने हौद में डालकर लगभग ३० दिन तक सुबह और शाम अच्छी तरह से हिलाया जाता है इस बात का ध्यान अवश्य रखना चाहिये कि इसमें भैंस का दूध आदि का प्रयोग न हो केवल देशी प्रजाति की गाय के पदार्थों का ही प्रयोग करें। घरेलू मक्खियों को इस घोल में न पनपने दें इसके लिए इसको बारीक जाली या कपड़े से ढ़क कर रखें ताकि लार्वा आदि न पनपने पायें।

भौतिक एवं रासायनिक गुणों की जॉच में यह पाया गया है कि इसके अन्दर लगभग सभी प्रकार के सूक्ष्म् पोषक तत्वों के अलावा पौध वृद्धि हारमोन जैसे कि इन्डोल ऐसिटिक अम्ल, जीबरैलिक अम्ल आदि प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं।

किण्वन करने वाले सूक्ष्म जीवाणुओं जैसा कि यीस्ट, लैक्टोबैसिलस आदि की संख्या में बढ़ोत्तरी दुग्ध पदार्थों एवं शीरे की वजह से बहुत ज्यादा होती है। पी एच मान में कमी का मुख्य कारण जैविक अम्लों का किण्वन के दौरान रासायनिक क्रिया के द्वारा उत्पन्न होने से है। लैक्टो बैसिलस नामक जीवाणुओं के द्वारा बहुत तरह के लाभकारी मेटाबोलाइटस जैसे कि जैविक अम्ल, हाईड्रोजन पराक्साईड एवं कुछ एन्टी बायोटिक उत्पन्न होते हैं जो बीमारी फैलाने वाले रोगाणुओं की बढ़वार रोकते हैं। रासायनिक जॉच से पता चला है कि इसमें कई तरह के वसायुक्त अम्ल, एलकेन एवं एल्कोहल आदि भी पाये जाते हैं।

अनुमोदित मात्रा

१. **स्प्रे माध्यमः** परीक्षणों से पता चला है कि ३ प्रतिशत पंचगव्य का घोल सबसे प्रभावी होता है। तीन लीटर पंचगव्य लगभग १०० लीटर पानी में मिलाकर सभी प्रकार की फसलों पर इस्तेमाल किया जा सकता है। हाथ के द्वारा चलने वाली स्प्रे मशीन का पोर साईज सामान्य से अधिक होना चाहिए ताकि नोजल बंद न होने पाये।

२. **सिंचाई जल के साथः** ५० ली. पंचगव्य प्रति हेक्टेयर की मात्रा से सिंचाई जल के साथ या ड्रिप सिंचाई जल के साथ भी प्रयोग किया जा सकता है।

३. **बीज/पौध उपचारः** ३ प्रतिशत पंचगव्य के घोल में बीजों को लगभग २० मिनट तक भिगोयें तत्पश्चात् छाया में सुखाकर बिजाई करें। सब्जियों की पौध जैसे टमाटर, हरी मिर्च, गोभी आदि को भी उपरोक्त विधि से उपचारित किया जा सकता है। हल्दी, अदरक के राइजोम एवं गन्ने के सैट्स को लगभग ३० मिनट तक भिगोने के पश्चात् बुवाई करें।

४. **बीज भंडारणः ३ प्रतिशत पंचगव्य के घोल में भंडारित किये जाने वाले बीजों को भिगोकर एवं अच्छी तरह से सुखाकर भंडारित करने से बीज सुरक्षित रहते हैं।**

**पंचगव्य के लाभः**

**पत्तीः** पौधों के ऊपर यदि पंचगव्य के ३ प्रतिशत घोल का स्प्रे किया जाये तो पत्तियों का आकार बड़ा होगा जिससे प्रकाश संश्लेषण की क्रिया तेज होगी एवं अधिक कार्बोहाईड्रेट्स का निर्माण होगा।

**तनाः** पंचगव्य के उपयोग से तने अधिक मजबूत होते हैं एवं ज्यादा संख्या में शाखाएं निकलती हैं जिससे फलों की मात्रा में बढ़ोत्तरी होती है।

**जड़ः** ऐसा देखा गया है कि पंचगव्य उपचारित पौधों की जड़ें अधिक तेजी से फैलती हैं जिससे पौधों को सभी पोषक तत्व आसानी से उपलब्ध हो जाते हैं।

**उपजः** यह प्रायः देखा गया है कि साधारणतया जब खेतों को रासायनिक खेती से जैविक खेती में तब्दील किया जाता है तो उपज कम हो जाती है लेकिन पंचगव्य के उपयोग से उपज स्थिर एवं फसल लगभग १५ दिन पहले पकती है और सब्जियों, फलों एवं अनाज के स्वाद में भी बढ़ोत्तरी होती है। पंचगव्य के प्रयोग से रासायनिक आदानों से बचा जा सकता है।

**सूखा वहन्न क्षमताः** पंचगव्य के प्रयोग से पत्तियों के ऊपर एक पतली परत जम जाती है जिससे पौधों द्वारा वाष्पीकरण क्रिया द्वारा होने वाले पानी के ह्रास में कमीं आती है। पौधों की जड़ का अधिक फैलाव होने से पौधे में सूखा वहन करने की क्षमता बढ़ जाती है। इस तरह से सिंचाई जल की लगभग ३० प्रतिशत जरूरत कम की जा सकती है।

**पंचगव्य के भौतिक एवं रासायनिक गुण**

रासायनिक घटक

| | |
|---|---|
| पी. एच. | ५.४५ |
| ई. सी. $dSm^2$ | १०.२२ |
| कुल नत्रजन (ppm) | २२६ |
| कुल फास्फोरस (ppm) | २०६ |
| कुल पोटाश (ppm) | २३२ |
| सोडियम | ६० |
| कैल्शियम | २५ |
| आई ए ए (ppm) | ८.५ |
| जी. ए. (ppm) | ३.५ |
| **सूक्ष्मजीव संख्या** | |
| कुल फफूँदी | ३८८००/मि.ली. |
| कुल बैक्टीरिया जीवाणु | १८८००००/मि.ली |
| लैक्टोबेसिलस जीवाणु | २२६००००/मि.ली |
| कुल वायुवीय जीवाणु | १००००/मि.ली |
| अम्ल उत्पादक जीवाणु | ३६०/मि.ली |
| मेथानोजेन जीवाणु | २५०/मि.ली |

सारणी क्रमांक -२

पंचगव्य के जैविक घटक

| क्र.सं. | फैटी अम्ल | एल्केन्स | अल्कोनॉल एण्ड एल्कोहल्स |
|---|---|---|---|
| १. | ओलिक एसिडस | डेकेन | हेप्टानॉल |
| २. | पामिटिक एसिड | ओक्टेन | टेट्राकोसनॉल |
| ३. | माइरिस्टिक | हेप्टेन | हेक्साडेक्नॉल |
| ४. | डेकोनोर | हेक्साडेकेन | ओक्टाडेकोनॉल |
| ५. | डेकोनामिक | ओरिडेकेन | मेथनॉल, प्रोपनॉल, ब्यूटेनॉल एवं इथेनाल |
| ६. | ओक्टानोइक | | |
| ७. | हेक्सानोइक | | |
| ८. | ओक्टाडीकोनोइक | | |
| ९. | टेट्राडीकोनोइक | | |

**पंचगव्य का प्रयोग अन्तराल**

१. फूल आने से पूर्व - १५ दिन में एक या दो बार स्प्रे फसल अनुसार

२. फली बनने के समय - १० दिन में एक से दो बार, स्प्रे

३. फल पकते समय - फली पकते समय

**विभिन्न फसलों में पंचगव्य का प्रयोग**

| | |
|---|---|
| धान | पौध रोपण के १०, १५ ३० एवं ५० दिन पश्चात् |
| सूरजमुखी | बुआई के ३०, ४५ एवं ६० दिन पश्चात् |
| उड़द | वर्षा आधारित - पहला स्प्रे फूल आते समय दोबारा १५ दिन पश्चात् |
| मूंग | सिंचित - १५, २५ एवं ४० दिन पश्चात् |
| अरण्डी | बुआई के ३० एवं ४५ दिन पश्चात् |
| मूंगफली | बुआई के २५ एवं ३० दिन पश्चात् |
| भिंडी | बुआई के ३०, ४५, ६० एवं ७५ दिन पश्चात् |
| टमाटर | नर्सरी और पौध रोपाई के ४० दिन पश्चात्:- बीज उपचार १ प्रतिशत घोल १२ घंटे तक |
| प्याज | पौध रोपण के ०, ४५ एवं ६० दिन पश्चात |
| गुलाब | छंटाई एवं कली बनते समय |
| चमेली | कली बनते समय |
| वनीला | रोपाई से पहले वनीला सैट्स को भिगोकर रखना। |

GMGIPMRND—6154NCOF—31-05-2011.

# जैव उर्वरक, जैविक खाद एवं अन्य जैविक आदान उत्पादन विधियां
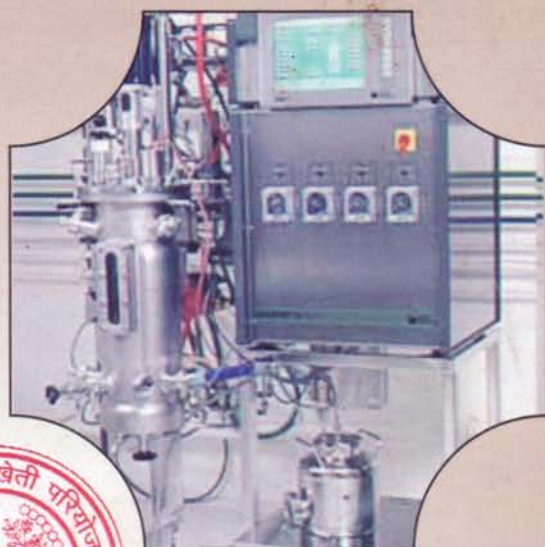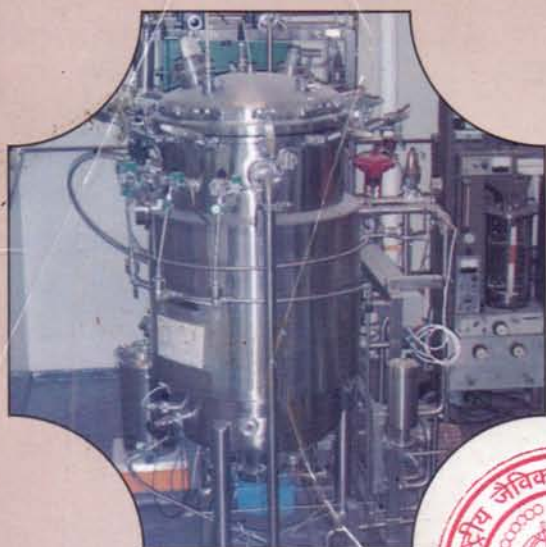
## राष्ट्रीय जैविक खेती केन्द्र


कृषि और सहकारिता विभाग
कृषि मंत्रालय, भारत सरकार
गाजियाबाद–201 001